मुस्लिम
लड़कियों की शिक्षा
समस्याएं और समाधान

उमर अफ़ज़ल
अनुवादक
अज़ीज़ अख़्तर

विषय-सूची

ज़रा सुनिए तो...

दिल्ली से निकलनेवाले एक अंग्रेज़ी दैनिक 'स्टेट्समैन' में काफ़ी दिनों पहले दो बुर्क़ापोश, फ़ैशनेबुल औरतों की तस्वीरें प्रकाशित हुई थीं और साथ ही हिन्दुस्तान और ख़ास तौर से दिल्ली के मुस्लिम घरानों को पेश आनेवाली सामाजिक समस्याओं पर एक लम्बी टिप्पणी भी शामिल थी ।

टिप्पणी करनेवालों का रुख़ चाहे कुछ भी रहा हो उसने निश्चय ही हमारी कुछ दुखती रगों को छेड़ा था । टिप्पणी में सबसे ज़्यादा महत्व मुसलमान ख़ानदानों में शिक्षित महिलाओं की बढ़ती हुई संख्या और उनकी शादी में आनेवाली कठिनाइयों को दिया गया था ।

मैं ख़ुद पिछले कुछ वर्षों में एक गंभीर सामाजिक समस्या को सुलझाने के व्यावहारिक अभियान में सम्मिलित रहा हूँ और वह था उन लड़कियों की आबादकारी की समस्या जो किसी कारण अपने ख़ानदान से बिछड़ गई थी । इस आबादकारी की समस्या का अभियान यद्यपि बहुत हद तक सफल रहा, लेकिन बार-बार मसले सामने आते रहे । जी चाहता है कि उनमें से कुछ को मुस्लिम समुदाय की सामूहिक चेतना के सामने रख दिया जाए और साथ ही अपनी संवेदना को भी, ताकि उनका हल ढूँढ निकालने का कोई सामूहिक अभियान चलाया जा सके ।

मेरा संबोधन बुनियादी तौर पर लड़कियों की माँ से है । अगर उन्होंने मेरी इस छोटी-सी कोशिश से कोई फ़ायदा उठाया और उनके ज़िहन के इन अंधकारमय भागों में जिनपर रस्म व रिवाज़ों ने अंधकार की गहरी चादर तान दी है । अगर रौशनी की एक किरण भी पहुँच गई तो मेरा मक़सद पूरो हो गया ।

ख़ुदा की मदद ही से नेक काम के अवसर मिलते हैं ।

उमर अफ़ज़ल, 1973

रसूल (सल्ल०) की बशारतें

"जिसने तीन बेटियों या तीन भाइयों या दो बहनों या उनकी दो बेटियों की परवरिश की, उन्हें अदब सिखाया, उनके साथ अच्छा बरताव किया और उनकी शादियाँ कर दीं, तो उसके लिए जन्नत है ।"

(तिर्मिज़ी)

"जिसकी बेटी हो और वह न उसको ज़िन्दा दफ़्न करे, न उसे तुच्छ समझे और न उसपर बेटों को श्रेष्ठता दे, तो ख़ुदा उसे जन्नत में दाख़िल फ़रमाएगा ।"

(हदीस)

आपका मक़ाम

"अपनी औलाद की बेहतरीन परवरिश करो और उन्हें अच्छे आदाब सिखाओ इसलिए कि तुम्हारे बच्चे अल्लाह की तरफ़ से तुम्हारे लिए एक उपहार हैं ।"
—हदीस

"जब अपने बच्चों के बीच कोई चीज़ बाँटो तो सबको बराबर दो, अगर किसी को कुछ ज़्यादा ही देना हो तो फिर लड़कियों को ज़्यादा हिस्सा दे दो ।"
—हदीस

अल्लाह का शुक्र है कि हम मुसलमान हैं । उसका सबसे बड़ा एहसान यह है कि उसने हमें इस सच्चे और मुकम्मल दीन से नवाज़ा जो दुनिया के सभी इनसानों के लिए हमेशा के लिए एक मुकम्मल जीवन-व्यवस्था है । कुरआन और सुन्नत में वे सभी बुनियादी और ज़रूरी हिदायतें मौजूद हैं जो किसी भी इनसानी समाज की सारी जरूरतें पूरी कर सकती हैं ।

अगर आप वास्तव में मुसलमान बनना चाहती हैं तो आपको एक अच्छा मुसलमान और एक अच्छा इनसान बनने के लिए इससे बेहतर और पूर्ण हिदायतें कहीं और नहीं मिल सकतीं, जैसी कुरआन पाक और सुन्नते रसूल (सल्ल०) में मौजूद हैं । ज़रूरत सिर्फ़ इस बात की है कि आप इन हिदायतों को अपना रहनुमा बना लें ।

आपकी ज़िन्दगी तीन हिस्सों में बँटी हुई है । शुरू के अठारह-बीस साल, जब आपकी हैसियत बेटी और बहन की होती है । उसके बाद के बीस साल जब आप बीवी और बहू बनकर कहीं पहुँचती हैं और आख़िरी अठारह-बीस साल जब आप माँ और सास का रूप धारण कर लेतीं हैं ।

बेटी और बहन

"एक व्यक्ति हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) के पास बैठा था, जिसकी कई लड़कियाँ थीं । उसने तमन्ना की कि काश ये सब मर जातीं । हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) उसपर बहुत बिगड़े और ग़ुस्से में कहा कि क्या तुम उनको रोज़ी देनेवाले हो ?"
—हदीस

इस्लाम से पहले बेटी और बहन की क्या हैसियत थी उसे अगर याद करें तो आपके रोंगटे खड़े हो जाएँगे । लड़की बाप ही नहीं पूरे ख़ानदान के लिए मनहूस

समझी जाती थी और उसे जिन्दा दफ़्न कर देने का चलन बहुत-सी जगहों पर आम था। मालूम नहीं आज भी कितने ही समाजों में यही कैफ़ियत बरक़रार है, चाहे वह जिन्दा दफ़्न करने की रस्म ख़त्म हो चुकी हो। लड़की की पैदाइश को अशुभ और हीनता का कारण माना जाता है। माँ-बाप की विरासत में उसे कोई हिस्सा नहीं दिया जाता। बचपन में उसे माँ-बाप का, शादी के बाद शौहर का और शौहर के बाद लड़कों का ग़ुलाम माना जाता है।

इस्लाम का कितना बड़ा एहसान है कि उसने औरतों को इस गड्ढ़े से निकाल कर एक इज़्ज़तवाले मक़ाम पर ला बैठाया। अब आप ग़ुलाम नहीं, माँ-बाप की विरासत में उसी तरह शरीक हैं जैसे लड़के। शादी के बाद आप शौहर की बाँदी नहीं। शौहर के लिए ज़रूरी है कि आपको महर अदा करें। अब आप शौहर और बच्चों की चीज़ों में अहम हिस्सेदार की हैसियत रखती हैं, जिसे कोई नज़रअंदाज़ नहीं कर सकता।

बहुत-सी जिहालत की रस्मों में ग्रस्त होने के बावजूद मुसलमान घरानों में बेटी की पैदाइश को मनहूस (बुरा) नहीं समझा जाता। माँ-बाप और भाई-बहन सभी इसपर स्नेह और प्यार न्योछावर करते हैं।

आप हमेशा यह याद रखिए कि कुछ ही दिनों तक आपको माँ-बाप के साथ रहना है। यह तो वह घरोंदा है जहाँ आपको अपना असल घर बसाने की ट्रेनिंग लेनी है। यहाँ यक़ीनन आपको ऐसा माहौल मिलता है जहाँ हर तरफ़ शफ़क़त, मुहब्बत और हमदर्दी होती है। दिन बेफ़िक्री से कटते हैं, न बच्चों की झंझट, न शौहर की फ़िक्र और न सास-ससुर का ध्यान।

शुरू के पाँच-छह साल तो खेलने-खाने में गुज़र जाते हैं, उसके बाद दस साल की अवधि वह है जो एक लड़की की तालीम व तरबियत के लिए इंतिहाई अहम है। इसकी आगे आनेवाली कामयाबियों और नाकायिमयों की नींव यहीं पड़ती है। अगर उसने इन दस सालों से पूरा फ़ायदा उठाया और उसके माँ-बाप तालीम व तरबियत के सिलसिले में अपनी जिम्मेदारियों से ग़ाफ़िल नहीं रहे तो सोलह, सत्रह साल की उम्र तक पहुँचते-पहुँचते लड़की वह मोती बन जाती है, जिसकी आभा दुनिया को वशीभूत करके रख देती है। अगले दो-तीन सालों में जब तक उसकी शादी नहीं हो जाती उसकी ज़िम्मेदारियाँ बहुत बढ़ जाती हैं।

अठारह, उन्नीस साल की किसी लड़की की तुलना उसी उम्र के एक लड़के से कीजिए तो दोनों में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ नज़र आएगा। लड़के में न वैसा बुद्धि-कौशल मिलेगा जो लड़की के अन्दर इस उमर में पैदा हो जाता है और न ज़िम्मेदारियों का वैसा एहसास। लड़का अभी तक एक मनमौजी नौजवान है, जबकि

उसी उम्र की लड़की उससे कहीं ज़्यादा गंभीर परिपक्व बुद्धि की मालिक होती है ।

इन दस सालों में सिर्फ़ स्कूली शिक्षा किसी तरह काफ़ी नहीं । आगे आनेवाले दिनों में ये पाठ्य-पुस्तकें शायद आपके किसी काम न आएँ । उनका असल मक़सद तो बुद्धि को तैयार करना है, उन ज़िम्मेदारियों के लिए जो जल्द ही आपके ऊपर आनेवाली हैं । स्कूली तालीम के अलावा अब हुनर और ढंग भी ज़रूरी है । इस उम्र में अगर बच्चियों को हाथ लम्बे और ज़बान छोटी रखने की आदत डाल दी जाए, तो वह दूसरे दौर की ज़िम्मेदारियाँ ख़ूब अच्छी तरह निभा सकती हैं । यह दौर तालीम व तरबियत का है और आज्ञापालन और ख़िदमत का भी ।

लड़की को सादगी और पाकीज़गी का आदी बनाइए, उसमें हर वक़्त आइने के सामने खड़े रहने की आदत न पैदा होने दीजिए । लज्जा और पाकदामनी सब से ज़्यादा मूल्यवान जौहर हैं, शीशे की तरह नाज़ुक, अगर एक बार इस शीशे में बाल पड़ गया तो फिर दोबारा साफ़ होना नामुमकिन है । लड़कियों में शर्म व हया का गहरा एहसास होता है, अगर उसे नीची निगाह और नज़र की पाकीज़गी का आदी बना दिया जाए तो उसके लिए ज़िन्दगी भर अपनी आबरू की हिफ़ाज़त कर लेना कोई मुश्किल नहीं ।

अगर आपने अपने बरताव से उसके सामने ख़राब नमूने पेश किए, उसकी शर्म व हया को ठेस लगाई, सिनेमा, गंदी किताबों और पत्रिकाओं का आदी बना दिया, बुरी सोहबतों में पड़नें से नहीं रोका तो कुछ ही दिनों में वह आपके लिए जान की बला और दिल का काँटा बन जाएगी । आप क्यों यह उम्मीद रखते हैं कि ख़ुद आपकी ज़िन्दगी तो बुराइयों से भरी हुई हो और आपके बच्चे निहायत शिष्ट और पवित्र आचरणवाले बनकर जवान हों । वे तो वही बनेंगे जिसका नमूना और आदर्श घर के बड़े उनके सामने पेश करते रहेंगे ।

बीवी और बहू

"दुनिया में बेहतरीन पूँजी एक पवित्र आचरणवाली बीवी है ।" —हदीस

औरत की ज़िन्दगी का दूसरा दौर उस समय शुरू होता है जब वह बेटी और बहन ही नहीं रहती, बीवी और बहू भी बन जाती है ।

अगर माँ-बाप ने अपनी तरबियत में कमी नहीं की है और शादी में अकारण और अनावश्यक देर से काम नहीं लिया है तो साधारण स्थिति में एक लड़की को अपनी शादी के सिलसिले में ज़्यादा भरोसा अपने माँ-बाप पर होता है । वह

अच्छी तरह यह जानती है कि उसके माँ-बाप का अनुभव और मालूमात उससे कहीं ज़्यादा हैं और वे सावधानी के साथ उसके लिए अच्छे से अच्छा रिश्ता तलाश कर रहे हैं । लड़की शादी से पहले ही किसी बुराई का शिकार नहीं होगी और अपने को हर बुरी बात से दूर रखेगी । शर्त यह है कि आप माँ की हैसियत से उसकी प्राकृतिक आवश्यकताओं से आँखें बन्द किए न बैठी रहें । आपकी लड़की तीस और चालीस बरस की उम्र को पहुँच जाए और आप हमेशा यही सोचती रहें कि वह तो एक नन्ही-सी गुड़िया है या अपनी जाहिलाना रस्मों और तंगनज़री के बंधनों में जकड़कर उसकी प्राकृतिक इच्छाओं को दबाने की कोशिश करें तो आप ख़ुद ही उसकी बरबादी को दावत दे रही हैं ।

शादी के बाद लड़की एक मज़बूत क़िले में पहुँच जाती है, अब उसे दूसरों का डर नहीं, इसलिए कि उसका शौहर उसकी हिफ़ाज़त के लिए तैयार रहता है ।

अगर आपकी लड़की सलीकेमंद है और तरबियत पाई हुई भी, तो उस क़िले में उसे वह सुकून नसीब होगा, जिसकी तलाश हर लड़की को रहती है ।

अगर आपने अपने शौहर को दुनिया में सबसे ज़्यादा सम्मान दिया और उसे अपनी सबसे ज़्यादा प्यारी चीज़ बना लिया तो आपके क़िले पर बाहर के सारे हमले नाकाम होते चले जाएँगे । कोई उसे तोड़ने की हिम्मत नहीं कर सकेगा । शर्त यह है कि—

1. आप अपने शौहर की पसंद और उसकी ख़ुशी का ख़याल रखें ।

2. उससे सच्ची मुहब्बत करें, जिसका इज़हार ज़बान से नहीं बल्कि आपकी एक-एक चीज़ से हो ।

3. उसके सामने हमेशा अपनी फ़रमाइशों की लम्बी-चौड़ी सूची बार-बार पेश करने के बजाए संतोष को अपना स्वभाव बनाएँ । उसके तोहफ़ों की क़द्र करें चाहे वह कितने ही मामूली क्यों न हों । जब वह आपके लिए कोई चीज़ लाए तो उसपर अपनी गहरी ख़ुशी का इज़हार करें ।

4. बदज़बानी और बदचलनी से बचें ।

5. ख़ुशी हो या ग़म दोनों में उसकी शरीक़ बनी रहें । हमेशा अपना दुखड़ा रोने के बजाए उसकी मुश्किलों को भी सुन लें ।

6. मुँह बिसोरे हुए या मैले-कुचैले लिबास में उसके सामने आने के बजाए हमेशा मुस्कुराते हुए और साफ़-सुथरे लिबास और अच्छी वेष-भूषा में उसके सामने आएँ ।

7. अगर कुछ नाराज़गी की नौबत आ जाए तो सबके सामने तू-तू, मैं-मैं से बचें। याद रखिए तन्हाई में आपकी एक मुस्कुराहट या आसुओं की कुछ बूँदें दिल का सारा ग़ुबार धो देती हैं।

बहू की हैसियत से हमेशा इस बात का ध्यान रखिए कि आपका शौहर सिर्फ़ आपका शौहर ही नहीं किसी का बेटा, किसी का भाई और किसी का किसी और तआल्लुक़ से रिश्तेदार भी है। उसपर सभी के कुछ अधिकार हैं और उनको अदा करना उसका फ़र्ज़ है। अगर आप इस फ़र्ज़ की अदाएगी की राह में रुकावट बनेंगी तो आपको हर तरफ़ से मुश्किलों, लड़ाई-झगड़ों और तानों का सामना करना पड़ेगा।

आपको एक नए माहौल में अपने को फिट करना है। सास और ससुर आपके लिए नए माँ-बाप हैं और देवर और ननदें, नए भाई-बहन। अगर आप उनका दिल जीतने के लिए ज़रा-सा झुक जाएँ तो क्या हर्ज है। फिर देखिए कि उस घर में जहाँ आप एक अजनबी की हैसियत से दाख़िल हुई थीं, किस तरह सिर आँखों पर बिठाई जाती है।

माँ और सास

यह औरत का आख़िरी रूप है और शायद उसकी अहमतरीन हैसियत भी। वह उम्र के इस दौर में पहुँचकर एक विशालकाय वृक्ष बन जाती है।

अब उसे सिर्फ़ घर-गृहस्थी की फ़िक्र ही नहीं औलाद की परवरिश और तरबियत भी करनी है। शौहर और बच्चों के बीच एक संतुलन क़ायम रखना है, ताकि पलड़ा किसी एक तरफ़ ज़्यादा न झुक जाए। ग़ुस्से की जगह हमदर्दी, मुहब्बत और दिल सोज़ी के साथ बुराइयों से बच्चों को बचाना है। अगर घर लड़ाई-झगड़ों से जहन्नम का नमूना बना हुआ है, तो बच्चों की परवरिश और तरबियत पर भी उतने ही बुरे असर पड़ेंगे।

अब घर में दामाद और बहू के क़दम आएँगे, दोनों उसके लिए अजनबी हैं। अगर वह उनका ख़ुशदिली के साथ स्वागत करेगी और उन्हें उनके सही मक़ाम पर बिठाएगी तो ये अजनबी उसकी औलाद का प्रतिरूप साबित होंगे। लेकिन अगर उसने ऐब निकालने का रवैया अपनाया, हर बात में कीड़े निकाले और शिकायतों का दफ़्तर खोले रखा तो नतीजा यही निकलेगा कि जिस घर को उसने सालों की मेहनत के बाद बनाया था, उजड़ जाएगा। जिन ख़ुशियों की ख़ातिर उसने बहू और दामाद को घर में बिठाया था वह ख़्वाब बनकर रह जाएँगी। हर वक़्त की लड़ाई से मुहल्ले और पड़ोस में हँसी उड़ेगी और उसके घर की बनी बनाई इज़्ज़त मिट्टी में मिल जाएगी। क्या आप यह पसंद करेंगी ?

लड़कियों की परवरिश

"मैने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को फ़रमाते सुना कि जब किसी के यहाँ लड़की पैदा होती है तो अल्लाह उसके यहाँ अपने फ़रिश्ते भेजता है जो कहते हैं : ऐ घरवालो ! तुमपर सलामती हो । वे लड़की को अपने परों के साये में ले लेते हैं और उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहते हैं : यह एक कमज़ोर जान है जो एक कमज़ोर जान से पैदा हुई है । जो इस बच्ची की परवरिश करेगा क़ियामत तक ख़ुदा की मदद उसके साथ रहेगी ।" —हदीस

सन् 1963 ई० की बात है, एक मुहतरम बुज़ुर्ग ने एक नाज़ुक मसले में मशविरा चाहा था । वह अपनी लड़की को अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजना चाहते थे । उनका मूड देखते हुए मशविरा देनेवाले ने चुप्पी साध ली । वह अपने फ़ैसले पर बस सहमति व्यक्त कराना चाहते थे । जब उन्होंने ज़्यादा इसरार किया तो मशविरा देनेवाले ने लड़की को अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी भेजने का विरोध किया । आप कह सकते हैं कि उनकी सोच बहुत दक़ियानूसी और संकीर्ण थी लेकिन बात यह नहीं थी । न वे उच्च शिक्षा के विरोधी थे और न लड़कियों को जाहिल रखना पसंद करते थे बल्कि यूनिवर्सिटी के आवासीय छात्रावास में लड़की की रिहाइश को पसंद नहीं करते थे । वह ख़ुद यूनिवर्सिटी के न सिर्फ़ शुभचिन्तकों में से थे, बल्कि उसके ओल्ड बॉय भी थे और वहाँ के होस्टलों की ज़िन्दगी को क़रीब से कई साल तक ख़ूब देख चुके थे । होस्टलों में आरोपित पाबंदियों और सावधानियों से ख़ूब वाक़िफ़ थे ।

मसला जिस लड़की का था वह एम०ए० थी और पी०एच०डी० करना चाहती थी । उम्र की उन मंज़िलों से गुज़र चुकी थी जहाँ उन्हें लड़की समझा जा सकता हो । बाल अगर खिचड़ी नहीं हुए थे तो कनपटियों पर सफ़ेद ज़रूर हो गए थे । सबसे बड़ी बात यह कि वह बौद्धिक दृष्टि से ख़ासी पुख़्ता और इस्लाम की पाबन्द थी । इन सारी बातों के बावजूद 'मुस्लिम यूनिवर्सिटी की लड़कियों के लिए विशेष होस्टलों में' उनकी रिहाइश भी मशविरा देनेवाले को मुनासिब नहीं महसूस हुई ।

यक़ीनन यह सावधानी का तक़ाज़ा था लेकिन अब दूसरा रुख़ भी ज़रा सामने रखिए ।

यह बड़ी सन्तोषप्रद बात है कि मुसलमानों ने मक़ामी तौर पर बहुत-सी जगहों पर ऐसे तालीमी इदारों का बंदोबस्त किया है जहाँ उनकी लड़कियाँ तालीम हासिल

कर सकें । कई मुस्लिम तहरीकों की तरफ़ से न सिर्फ़ एक अच्छा तालीमी निसाब (पाठ्यक्रम) बल्कि उसके प्रस्तावित स्तर के मुताबिक़ आवश्यक किताबों की बहुत बड़ी तादाद भी उपलब्ध कराई गई है । संगठित रूप से ये कोशिशें न सिर्फ़ पसंदीदा हैं, बल्कि बहुत ज़रूरी हैं और हर मुसलमान का फ़र्ज़ है कि वह इन कोशिशों में अपना व्यावहारिक सहयोग दे ।

लेकिन अगर हम आँकड़ों की भाषा में बात करें तो इसका इनकार सारी ख़ुश-फ़हमियों के साथ नामुमकिन है कि ऐसे मदरसों की तादाद बहुत कम है और वह भी कुछ जगहों पर । देश-व्यापी पैमाने पर जितनी तेज़ी से तालीम आम हो रही है, मुसलमानों के ये तालीमी इदारे उस रफ़्तार का साथ नहीं दे पा रहे हैं । जो हैं भी उनमें से कुछ को छोड़कर न तो उनका तालीमी स्तर ही बहुत ऊँचा है और न माली हालत ही बेहतर है । लोगों के मुख़्लिस होने में तो सन्देह नहीं लेकिन उच्चशिक्षा का अभाव, आर्थिक रूप से पिछड़ापन और साधनों की कमी की वजह से न तो मुसलमान अपने इन इदारों को अच्छी तरह चला पाते हैं और न उन्हें अत्याधुनिक इदारों जैसा बनाने की क्षमता रखते हैं । सरकार से शैक्षिक अनुदान मिलने का न तो सवाल है और न संभावना, अगर कुछ जगहों पर इसकी सम्भावना हो भी जाए तो उसकी पाबंदियों और शर्तों से इदारे का वुजूद निरर्थक हो जाता है ।

इन हालतों में आख़िर हम क्या करें ?

लड़कियों की तालीम

सरकारी स्कूलों में लड़कियों को भेजने की सारी ख़राबी स्वीकार है । मगर आप इससे भी तो इनकार नहीं कर सकते कि मुसलमान लड़कियों के लिए तालीम बेहद ज़रूरी ही नहीं बल्कि हमारे सामुदायिक संरक्षण के लिए लाज़िमी भी है ।

तालीम दिलानी है तो बच्चों को उन्हीं स्कूलों में भेजना होगा जो हमारे आस-पास मौजूद हैं और जिनमें से अधिकतर सरकार के कंट्रोल में हैं । सरकारी या अर्ध-सरकारी स्कूलों में लड़कियाँ तालीम हासिल करेंगी । तो उसी पाठ्यक्रम के मुताबिक़ जो वहाँ लागू है । ये पाठ्यक्रम सरकार की सारी नेक नीयती के बावजूद बड़ी हद तक इस्लामी वैचारिकता के प्रतिकूल ही नहीं, बल्कि उसमें इस्लाम की बुनियादी धारणाओं तक को समाप्त कर देने की कोशिश मिलेगी ।

स्कूली लिबास

लड़कियाँ स्कूल जाएँगी तो उन्हें एक विशेष प्रकार के लिबास (ड्रेस) की

पाबंदी भी साधारणतः करनी पड़ेगी । परदे की आधुनिक कठोरता तो दरकिनार शायद बुर्क़ा पहनना और पहनाना दिन-प्रतिदिन मुश्किल होता जाएगा । स्कूल की दूसरी लड़कियों के प्रभावों से भी वह वंचित नहीं रह सकेंगी । लिबास की डिज़ाइन नए फ़ैशन के कपड़े और बनाव-सिंगार भी निश्चय ही उनको प्रभावित करेंगे । और भी बहुत-सी समस्याएँ हैं जिनका हमको सामना करना होगा । उनका हल क्या है ? शायद मैं भी कोई ऐसा जवाब न दे सकूँ जो हर एक को संतुष्ट कर सके और हर हालत में व्यावहारिक भी हो । हो सकता है कि मेरे हल से आप सहमत न हों । यह भी सम्भव है कि आप इसका पूरी शिद्दत से विरोध करें लेकिन बहरहाल मेरी नेक नीयती पर आपको संदेह नहीं होना चाहिए ।

मैं अपना सवाल फिर दुहरा दूँ । आख़िर मौजूदा हालत में हम क्या करें ? क्या लड़कियों को स्कूल भेजना बंद कर दें ? या फिर उन्हें मंझधार में छोड़ दें कि माहौल उन्हें जिस तरफ़ चाहे बहा दे ? यक़ीनन इन दोनों में से कोई हल न तो स्वीकार करने योग्य है और न ही व्यावहारिक ।

उपचार

ये बात बहरहाल हम सब जानते हैं कि हमें अपनी लड़कियों को तालीम दिलानी होगी । इसके लिए विवशता की स्थिति में ही सही हमें अधिकाँशतः सरकारी या अर्ध-सरकारी स्कूलों का ही सहारा लेना होगा । देखना यह है कि वहाँ की हानियों से बचाने के लिए हम क्या कर सकते हैं ।

हम लाज़मी तौर पर अपनी लड़कियों को मुसलमान ही देखना पसंद करेंगे । अगर हमने यह फ़ैसला कर लिया है तो फिर—

1. हमें उनकी बुनियादी दीनी तालीम का बंदोबस्त घरों पर करना होगा । इस मक़सद के लिए सिर्फ़ नाज़रा क़ुरआन पाक पढ़ाना ही काफ़ी नहीं । इस्लाम के बुनियादी अक़ीदों का ज्ञान और उनपर पुख़्ता ईमान पैदा करने की हर सम्भव कोशिश करनी पड़ेगी । इस काम के लिए काफ़ी साहित्य आसानी से मिल जाएगा ।

> "अपने रब के रास्ते की तरफ़ दावत दो हिकमत और अच्छी नसीहत के साथ और लोगों से बहस करो ऐसे तरीक़े पर जो बेहतरीन हो ।"
>
> —क़ुरआन, 16:125

बच्चियों को इस्लाम और मुसलमानों से सम्बन्धित बहुत-सी बदगुमानियों और ग़लत फ़हमियों का सामना करना पड़ेगा उनमें से कुछ तो जान-बूझकर फैलाई गई हैं औ, कुछ का कारण सिर्फ़ ग़लतफ़हमी है । उनको दूर करने के लिए तत्काल

सही जवाब बच्चियों के ज़िहन में होना चाहिए । वक़्त के साथ-साथ उनके अन्दर शऊर की पुख़्तगी ही नहीं, ईमान की पुख़्तगी भी जागृत हो जाएगी ।

2. कुछ एतराज़ बड़ी शिद्दत के साथ बार-बार उनके सामने दुहराए जाएँगे । मिसाल के तौर पर मुसलमान गंदे होते हैं, मुसलमान गोश्त खाते हैं, मुसलमान दूसरों की पूजा में शरीक नहीं होते इत्यादि ।

इनका जवाब कटुता और ग़ुस्से से देने की ज़रूरत नहीं । बच्चियों के ज़िहन को इस तरह तैयार कीजिए कि वह विनम्रतापूर्वक उसका जवाब दे सकें । उन्हें नहला-धुला कर और साफ़-सुथरे कपड़े पहनाकर भेजिए । अपने घर पर सफ़ाई की यथासम्भव व्यवस्था कीजिए, ताकि अगर स्कूल की सहेलियाँ कभी घर आ जाएँ तो शर्मिंदगी न उठानी पड़े । वैसे भी सफ़ाई-सुथराई ईमान का एक अंग है ।

गोश्त खाना

> "तुमपर हराम किया गया मुर्दार, ख़ून, सूअर का गोश्त, वह जानवर जो ख़ुदा के सिवा किसी और के नाम पर ज़बह किया गया हो, वह जो गला घुटकर या चोट खाकर या बुलंदी से गिरकर या टक्कर खाकर मरा हो या जिसे किसी दरिन्दे ने फाड़ा हो । सिवाए उसके जिसे तुमने जिंदा पाकर ज़बह कर दिया हो और वह जो किसी आसताने पर ज़बह किया गया हो ।"
>
> — क़ुरआन, 5:3

गोश्त खाने का मसला ज़रा नाज़ुक है लेकिन इस सिलसिले में भी उज़्र चाहने की ज़रूरत नहीं । अगर बच्चियों को गोश्त खाने की वैधता की बुनियादी वजह समझा दी जाए तो वह मुनासिब ढंग से हमजोलियों को संतुष्ट कर सकती हैं । इस्लाम ने हराम और हलाल का जो भेद किया है वह भी स्पष्ट होना चाहिए । सवालात की अहमियत और माक़ूलियत को देखते हुए विभिन्न जवाब दिए जा सकते हैं बशर्ते कि माँ-बाप ख़ुद उन मसलों से किसी हद तक वाक़िफ़ हों ।

गोश्त ख़ाना अपने आप में इनसान के गंदे होने की दलील नहीं । यह तो हर एक की अपनी निजी पसंद पर आधारित है । इस्लाम ने भी उसे किसी मज़हबी कर्त्तव्य की हैसियत नहीं दी है । ख़ुद ग़ैरमुस्लिमों में न जाने कितने लोग गोश्त खाते हैं । फिर अगर अण्डे, मछली इस्तेमाल करने में कोई हर्ज नहीं तो आख़िर गोश्त क्यों मना हो ।

बच्चियों को यह भी बता दीजिए कि हर तरह का गोश्त मुसलमान के लिए जाएज़ नहीं । बहुत-से जानवरों का गोश्त खाना हराम है । उन जानवरों का गोश्त

हलाल है जिनकी इजाज़त इस्लाम ने दी है और जिनको सिर्फ़ अल्लाह का नाम लेकर ज़बह किया गया हो ।

आपके बच्चे दूसरों के घरों में जा सकते हैं और वहाँ उनके सामने गोश्त खाने के लिए परोसा जा सकता है, इस सिलसिले में हर सम्भव संयम ज़रूरी है । बेहतर यही है कि ग़ैर मुस्लिम घरों में पके हुए गोश्त से परहेज़ किया जाए । मालूम नहीं वह गोश्त झटके का हो या अल्लाह के अलावा किसी और के नाम पर ज़बह किया गया हो ।

पूजा

"क्या मैं अल्लाह के सिवा कोई और माबूद तुम्हारे लिए तलाश करूँ ?" — क़ुरआन, 7:140

पूजा में शरीक न होना भावनात्मक दृष्टिकोण से हमजोलियों को विषाददायक होता है और शायद यही चीज़ मुस्लिम लड़कियों को दूसरों से सबसे अधिक विशिष्टता भी प्रदान करती है । इसमें भी शर्मिंदगी का नहीं, गर्व का एहसास बच्चे के अन्दर पैदा कीजिए । उसके दिल में इसका पुख़्ता यक़ीन पैदा कीजिए कि मुसलमान अल्लाह के सिवा किसी को माबूद नहीं मानता । ख़ुद पूजना तो दूर रहा, अल्लाह के सिवा किसी को पूजना इनसान की सबसे बड़ी और भयानक ग़लती समझता है ।

इनसान की दुनिया में हैसियत और उनके मुक़ाबले में मूर्तियों और तस्वीरों की बेबसी और खोखलापन बच्चे के ज़िहन में आसानी से बिठाया जा सकता है ।

ख़ुद मुझे बार-बार शैक्षणिक संस्थाओं में इस परिस्थिति का सामना करना पड़ा । मैंने बड़ी हिम्मत से न सिर्फ़ भूमि पूजा, सरस्वती पूजा और ऐसी ही दूसरी पूजाओं में शरीक होने या चँदा देने से अपने को अलग रखा, बल्कि नर्मी से लोगों को इसका क़ायल भी कर दिया कि मैं क्यों इनमें शामिल होना गुनाह समझता हूँ । सख़्ती से डाँटने या हठधर्मी से इनकार कर देने से जज़्बात भड़क सकते हैं । आप बच्चियों को समझा दें कि इन पूजाओं में शरीक होने के बाद कोई मुसलमान मुसलमान ही नहीं रहता । मज़हबी जज़्बात से अलग हटकर इस तरह की पूजा इस वैज्ञानिक युग में बौद्धिकता से कितनी दूर की बात है, यह बात भी बहुत आसानी के साथ स्पष्ट की जा सकती है ।

फ़ैशन

"हमने तुमपर लिबास उतारा है, ताकि तुम्हारे बदन के शर्मवाले हिस्सों

को ढाँकने और तुम्हारे लिए बदन की हिफ़ाज़त और ज़ीनत का ज़रिया हो ।
—— क़ुरआन

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने एक आदमी को देखा जो गर्द व ग़ुबार से अटा हुआ था और जिसके बाल बिखरे हुए थे । आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि क्या उसके पास कोई कंघी नहीं जिससे वह अपने बालों को दुरुस्त करे और आप (सल्ल०) ने एक दूसरे आदमी को देखा जिसने मैले कपड़े पहन रखे थे । आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि क्या उसके पास वह चीज़ नहीं जिससे यह अपने कपड़े धोले ।
— हदीस

लड़कियों को कपड़ों के मामले में न तो बहुत दबाकर रखना चाहिए और न ही उन्हें नित नए फ़ैशन का आदी बना देना चाहिए । आप उन्हें मुनासिब और सँतुलित कपड़े पहनने का आदी बनाएँ । कपड़े क़ीमती न सही साफ़-सुथरे ज़रूर हों, फटे हुए या बेहँगम सिले हुए न हों । यह हमेशा ध्यान रहे कि आपका हर व्यवहार आपके ग़ैर मुस्लिम पड़ोसी के लिए इस्लाम का नमूना है ।

> "ऐ नबी अपनी बीवियों और बेटियों और ईमान लानेवाली औरतों से कह दीजिए कि अपने ऊपर अपनी चादरों के पल्लू लटका लिया करें । यह ज़्यादा मुनासिब तरीक़ा है, ताकि वे पहचान ली जाएँ और सताई न जाएँ ।"
> —क़ुरआन

अपनी माली हैसियत के मुताबिक़ बच्चियों को ज़रूरत भर कपड़े मुहैया कीजिए । उन्हें यह भी आज़ादी दीजिए की कपड़ों की तराश-ख़राश उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ हो । शर्त सिर्फ़ यह है कि ये इस्लामी सीमाओं को पार न करें । कपड़े न तो बहुत बारीक हों जिनसे बदन झलकता हो और न इतने चुस्त कि जिससे अंगों की नुमाइश होने लगे । ऐसे कपड़े आजकल फ़ैशन का हिस्सा बन गए हैं, इसलिए हो सकता है कि आपकी बच्ची इसकी फ़रमाइश करे । आप उसे इस्लाम की बताई हुई हदों से आगाह करें और मौजूदा बेहयाई और उससे पैदा होनेवाले फ़ितनों से भी आगाह करें । आप (सल्ल०) ने फ़रमाया—

> "जब अल्लाह ने माल दे रखा है तो उसके कृपा और एहसान का असर तुम्हारे बदन पर अच्छे कपड़ों से ज़ाहिर होना चाहिए ।"

बच्चियाँ जब तक 10-11 साल की नहीं हो जातीं उनके लिबास माँ-बाप की पसन्द के अनुकूल होते हैं, आपकी माली हैसियत चाहे कितनी ही अच्छी क्यों न हो, आप उन्हें हद से ज़्यादा आज़ाद ख़याली का आदी न बनाए । आप आसानी के साथ उन्हें ऐसे कपड़ों का आदी बना सकते हैं जो तराश- ख़राश में

तो चाहे नए फ़ैशन के मुताबिक़ हों, लेकिन इस्लाम की बताई हुई हदों के अन्दर हों। साफ़-सुथरे अच्छे और निफ़ासत से सिले हुए कपड़े पहनना कोई बुराई नहीं। इस्लाम तो मुसलमानों को नमाज़ पढ़ने के लिए भी अपने बेहतरीन कपड़ों में मस्जिद में आने की दावत देता है।

लड़कियों के बनाव-सिंगार में अनुचित रुकावट पैदा न कीजिए, बल्कि उसे हदों का पाबन्द रख़िए। हद से ज़्यादा बनना, सँवरना, घंटों आइने के सामने पोज़ बनाना और फिर बन-ठनकर बाहर निकलना बहुत बड़ा फ़ितना है। आजकल स्कूल जानेवाली लड़कियों में ये बीमारी बहुत तेज़ी से फैल रही है। बालों के नित नए डिज़ाइन, सुर्ख़ी, ग़ाज़ा, लिपेस्टिक और ऐसी ही दूसरी चीज़ों से कम-से-कम स्कूल जाते वक़्त परहेज़ कराइये। घर में भी इनके ज़रूरत से ज़्यादा इस्तेमाल पर आप नज़र रखिए।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया—
"जिनके बाल हों वे उन्हें सँवारें।" —हदीस

बालों को सँवारना बड़ी अच्छी बात है। अपनी बच्ची को कभी इस तरह स्कूल न जाने दीजिए कि वहाँ 'सिर झाड़ मुँह फाड़' का ताना सुनना पड़े। तेल और पाउडर भी ठीक ही हैं। दाँतों और नाख़ूनों की सफ़ाई का भी ख़याल रखना है। किन्तु ख़ुशबू और खनकते ज़ेवर औरत के लिए फ़ितना हैं। यूँ भी स्कूल जानेवाली बच्ची के लिए इनका कोई फ़ायदा नहीं।

ध्यान रखिए : दिखावा नहीं, बल्कि सफ़ाई और निफ़ासत हमारा मक़सद है।

माहौल के प्रभाव

"माँ-बाप का बेहतरीन उपहार औलाद की सही तालीम और तरबियत है ।"

—हदीस

"इल्म सीखो और लोगों को सिखाओ ।" —हदीस

आपको अपनी बच्चियों का दीनी तालीम की तरफ़ तवज्जोह देनी चाहिए, लेकिन एक और पहलू ख़ासा अहम है जिसकी तरफ़ हर मुसलमान ख़ानदान को ख़ुसूसी ध्यान देना ज़रूरी है और वह है । सरकारी स्कूलों में प्रचलित तालीम के निसाब (पाठ्यक्रम) का आपके बच्चों पर प्रभाव ।

स्कूलों का पाठ्यक्रम

7 अप्रैल, 1972 ई० के "हिन्दुस्तान टाइम्स" में एक मुसलमान ख़ावर बाशा (उम्र 52 साल) का परिचय बहुत-ही विस्तार के साथ प्रकाशित हुआ है । उन्हें एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ी अख़बार में बहुत ऊँचा स्थान देने का सेहरा है हमारे सेक्यूलर क़ौम परस्तों के सर ।

ख़ावर बाशा मुसलमान हैं और उनकी मातृभाषा उर्दू है, लेकिन वे अपने को ख़ावर बाशा (दास) कहलवाने पर गर्व महसूस करते हैं । पिछले बीस साल से भी ज़्यादा अर्से से वे हरि कथा सुनाते रहे हैं । पहले तमिल, तेलगू में और अब हिन्दी में । हरि कथा का मतलब कुछ आपकी समझ में आया ? अगर न आया हो तो अपने किसी हिन्दू भाई से पूछ लीजिए ।

उनपर परिचयात्मक टिप्पणी लिखनेवालों ने बड़े गर्व से यह बताया है कि ख़ावर बाशा किसी तरह से मुसलमान नज़र नहीं आते । उनका जो फ़ोटो प्रकाशित हुआ है वह परिचयात्मक टिप्पणी लिखनेवाले से कुछ ज़्यादा ही अनुकूल है । उन्हें देखकर हर व्यक्ति यही समझता है कि वे कोई पंडित हैं । पुराणों, महाभारत और रामायण आदि का पाठ करने में वह किसी पंडित से कम नहीं और उनका सँस्कृत का सही उच्चारण हर व्यक्ति को हैरत में डाल देता है ।

हाई स्कूल में अपनी तालीम के दौरान वे अपने हेड मास्टर गुरु सम्पागी रामा मूर्ति से बहुत प्रभावित हुए । उन्होंने ख़ावर बाशा को 'अमर कोष' में निपुण बना दिया औ कर्नाटक म्यूज़िक के भेदों से अवगत कराया ।

सेक्यूलर मुसलमान चाहे ख़ावर बाशा पर कितना ही गर्व क्यों न करें, लेकिन एक आम मुसलमान जिसके दिल में इस्लाम का कुछ भी अंश बाक़ी है ख़ावर बाशा को शायद मुसलमान तसलीम करना भी गवारा न करे । एक मुसलमान की हैसियत से अपने इस परिचय को शायद वह भी अपने मौजूदा रूप में पसन्द न करें । ख़ावर बाशा ने अपनी तौहीद और रिसालत की धारणा को रामायण और महाभारत की धारणाओं से किस तरह मिलाया है यह तो वही बता सकते हैं । लेकिन अंदाज़ा यही है कि या तो वे इस्लाम से बिलकुल अपरिचित हैं या फिर उन्होंने इसे तज दिया है । अपने को ख़ावर बाशा दास कहलवाना पसन्द करना तो कुछ ऐसी ही बात की निशानदही करता है ।

आपने सोचा कि यह कैसे हुआ ? यह सब करिश्मा है स्कूलों में एक उस्ताद की रहनुमाई का । और वे भी आज से पच्चीस-तीस साल पहले ख़ावर बाशा जब वहाँ पढ़ रहे होंगे, उस वक़्त शायद पाठ्यक्रम इतना पक्षपात पूर्ण नहीं था जितना अब है । धर्म-निर्पेक्षता के सारे दावों के बावजूद स्कूलों में आजकल पढ़ाई जानेवाली पाठ्यपुस्तकों का एक सरसरी जाइज़ा यह साबित करने के लिए काफ़ी है कि उनमें एक विशेष प्रकार के मज़हब और उसकी सांस्कृतिक कथाओं और रस्म व रिवाज को ज़िहननशीन कराने का दायित्व पूरी तेज़ी और अत्यन्त जोश-ख़रोश से अदा किया गया है । दूसरे मज़हबों का नाम या तो सिरे से उन किताबों में मिलता ही नहीं या अगर उनका परिचय कराने की कोशिश की भी गई है तो इंतिहाई ग़लत और निहायत ही भौंडे अंदाज़ से । इस्लाम उसकी धारणाओं और मुसलमानों से उन किताबों के लेखकों को जितना बैर है, चाहे यह उनकी कम इल्मी और ग़लतफ़हमी की वजह से हो या वह दियानतदारी से यही यक़ीन रखते हों, इसका अंदाज़ा किसी किताब के चंद वरक़ पलटते ही हो जाता है । कई मुस्लिम सँगठनों ने इन कोर्स की किताबों की ख़राबियों की तरफ़ हुकूमत को बार-बार ध्यान भी दिलाया है लेकिन अब तक इसका न कोई ख़ास असर हुआ है और न आइंदा इसकी कुछ ज़्यादा उम्मीद है ।

अस्सलामु अलैकुम या नमस्कार

आप ख़ुद अपने बच्चों को "अस्सलामु अलैकुम" के बदले नमस्ते या नमस्कार कहकर हाथ जोड़ते देखते होंगे । उनके मुँह से न जाने कितने शब्द निकलते रहते हैं, जैसे राम-राम आदि, जो साफ़ तौर पर इस्लाम के बुनियादी अक़ीदों, यहाँ तक कि तौहीद के ख़िलाफ़ हैं, लेकिन आपकी लापरवाही उसका कोई उपाय तलाश करने नहीं देती । स्कूलों में मुसलमान बच्चों और बच्चियों का ज़िहन

आहिस्ता-आहिस्ता इंतिहाई ग़ैर महसूस तरीक़े से इन बातों को क़बूल करने पर तैयार किया जा रहा है जिसे हम एक मुसलमान होने की हैसियत से कभी गवारा नहीं कर सकते । और चूँकि हम या तो इससे नावाक़िफ़ हैं या अपने बच्चों को मुसलमान रखने की तरफ़ से हद से ज़्यादा लापरवाह, इसलिए इन असरात का तोड़ भी करने की कोशिश नहीं करते ।

पिछले बीस-बाइस सालों में स्कूलों से उर्दू को लगभग निकाल बाहर किया गया है और इसका भी ख़ासा असर पड़ा है । उर्दू हमारी मज़हबी ज़बान न हो लेकिन बहरहाल हमारा ज़्यादातर धार्मिक साहित्य इसी भाषा में है और उसके शब्दों, कथनों और मुहावरों के साथ बहुत-से इस्लामी अक़ीदों का अटूट रिश्ता बन गया है ।

भाषा-परिवर्तन के प्रभाव

मैं यह तो नहीं कहता कि आप अपने बच्चों को हिन्दी और संस्कृति पढ़ने न दें, लेकिन यह ज़रूर कहूँगा कि उसके तहज़ीबी असरात से महफ़ूज़ रखने के सारे जतन करें, वरना ज़बान की तबदीली के साथ तहज़ीब की तबदीली लाज़मी है और आप भी अपने बच्चों को इससे हरगिज़ नहीं बचा सकेंगे । यूँ भी ज़्यादातर इस्लामी साहित्य उर्दू में ही मिलता है और बेहतर यही होगा कि अगर आपके बच्चे को उर्दू पढ़ने की सहूलत स्कूल में हासिल नहीं है तो घर पर या क़रीबी मदरसे में उसका इंतिज़ाम कर दें ।

1947 ई० से पहले पंजाब में हिन्दी लड़कियों की ज़बान कहलाती थी, वहाँ के सारे मर्द उर्दू पढ़ते और इस ज़बान का इस्तेमाल करते थे । मगर ग़ैर मुस्लिम लड़कियाँ हिन्दी ज़रूर सीखती थीं ताकि अपने मज़हब से उनका रिश्ता कमज़ोर न हो । क्या मुसलमान लड़कियाँ ऐसा नहीं कर सकतीं । आपको हर जगह ऐसी औरतें मिल जाएँगी जो आपकी छुट्टी के समय में आपको बिना फ़ीस लिए उर्दू सिखा देंगी । उनकी सेवाओं से ज़रूर आपको फ़ायदा उठाना चाहिए और फिर अपने बच्चों को आप ख़ुद आसानी से उर्दू सिखा सकती हैं । यह कोई मुश्किल काम नहीं और ऐसी सूरत में तो यह और भी आसान है अगर बच्चा हिन्दी लिखना पढ़ना जानता है । सिर्फ़ अक्षरों के ज्ञान की मदद से पढ़ना-लिखना काफ़ी हद तक आ जाएगा । ज़बान पर क़ाबू तो धीरे-धीरे ही आता है ।

माहौल

इदारों का माहौल बच्चों के ज़िहन को कितनी हैरतनाक तेज़ रफ़्तारी से किसी

दिशा में मोड़ सकता है इसका अंदाज़ा इन चंद मिसालों से हो सकता है जो नीचे लिखी हैं—

सरकार द्वारा चलाए गए एक ऐसे इदारे में जहाँ लावारिस लड़कियाँ और बेसहारा औरतें रखी जाती थीं, मैं यह देखकर दंग रह गया कि सारी मुसलमान लड़कियों का नाम रजिस्ट्रों में ग़ैर मुस्लिम नामों से दर्ज था जैसे, मुम्ताज़ नाम की एक लड़की ममता के नाम से दर्ज थी । यही नहीं वहाँ मेरे पहुँचने से पहले तक आनेवाली सारी मुसलमान लड़कियों की शादी उनकी मरज़ी के मुताबिक़ ग़ैर मुस्लिम लड़कों से की जाती रही थीं । ज़िम्मेदारों का बहाना तो यह था कि साहब हम क्या करें, ऐसे मुसलमान लड़के ही नहीं मिलते जो उनसे शादी करने पर तैयार हों । शादी के क़ाबिल मुसलमान लड़कियाँ और औरतें यह सोचकर ग़ैर मुस्लिमों से शादी के लिए हाँ कर देती थीं कि शायद इस तरह से उनका उजड़ा घर बस सके ।

इस इदारे की एक मुसलमान लड़की की तारीफ़ वहाँ की ज़िम्मेदार निगराँ औरत ने मुझसे इन शब्दों में की— "यह शिवजी की पूजा में बड़े लगन और चाव से हिस्सा लेती है ।" जब उसके सामने यह सुझाव रखा गया कि उसकी शादी किसी मुसलमान लड़के से कर दी जाए तो उसने एकदम इनकार कर दिया । उसे लड़का दिखाया गया जो अच्छा खाता-पीता और सेहतमंद ही नहीं शक्लो सूरत में भी अच्छा था, तब भी उसका आग्रह यही था कि वह किसी ऐसे हिन्दू लड़के से शादी करना पसँद करेगी जो शिवजी की पूजा में रुकावट न डाले ।

यह लड़की बचपन से ही इस इदारे में परवरिश पा रही थी । सरकार ने लगा-बँधा इंतिज़ाम कर दिया था और चूँकि इदारे का सारा माहौल ग़ैर इस्लामी था और तालीम व तरबियत के हर मौक़े पर ग़ैर इस्लामी रस्म रिवाज का चलन था इसलिए नाम से मुसलमान होते हुए भी वह लड़की 8-9 साल में ज़िहनी लिहाज़ से ग़ैर मुस्लिम बन चुकी थी ।

ज़िहनी तबदीली

सरकार द्वारा स्थापित किए गए एक और इदारे (संगठन) की, जिसके सारे ख़र्चे सरकार बरदाश्त करती है, एक और लड़की से मिलने का सँयोग हुआ । यह भी मुसलमान होते हुए ग़ैर मुस्लिम लड़के से शादी पर अड़ी हुई थी । लेकिन बचपन में किसी ने उसे कुरआन नाज़रा पढ़ाया था और किसी हद तक वह कलिमा और नमाज़ से भी वाक़िफ़ थी । काफ़ी समझाने-बुझाने पर वह एक मुसलमान नौजवान से शादी करने पर तैयार हुई । उसका शौहर न सिर्फ़ अमल से बहुत अच्छा इनसान था, बल्कि मुसलमान भी था । लड़की हाई स्कूल कर रही थी । उसके शौहर

ने उसे इस्लामी अक़ीदों और इबादतों पर किताबें मुहैया करा दीं और चंद ही दिनों में काया-पलट हो गई ।

इस ज़िहनी तबदीली के बावजूद शादी के काफ़ी समय बाद तक गोश्त खाना तो अलग, उसके नाम से भी उसे भय होता था । यह उस माहौल का असर था जिसमें वह 4-5 साल रही थी और जहाँ उसके कानों में गोश्तख़ोरी ही नहीं बल्कि इसके ख़िलाफ़ सारी बुराइयाँ ठूँस-ठूसकर भर दी गई थीं । शौहर ने उसकी ख़ुशी के लिए शादी के बाद गोश्त खाना बन्द कर दिया ।

5-6 महीने गुज़र गए । एक बार उसकी जिठानी ने उसे दावत दी । घर में दाख़िल होने पर उसकी नाक में चट-पटे मसाले की ख़ुशबू पहुँची तो बहुत पसँद आई । मालूम हुआ कि गोश्त भुन रहा है । उस दिन तो ख़ुशबू ही सूंघकर रह गई । कुछ दिनों बाद ज़रा हिम्मत हुई तो शोरबा खाया । लगभग एक साल के बाद गोश्तख़ोरी से उसकी वहशत दूर हो सकी, हालाँकि वह ज़िहनी तौर पर गोश्तख़ोरी के सिलसिले में इस्लामी हुकमों से ख़ासी हद तक वाक़िफ़ थी ।

ज़रा देखिए, सिर्फ़ चंद ही बरसों में उन दोनों लड़कियों के ज़िहन पर किस तरह वह नक़्शे बिठा दिए गए जो उनके मज़हबी अक़ीदों के बिलकुल उलटे थे और किस तरह उनमें से एक को ख़ासी कोशिश के बावजूद ज़िहनी तौर पर मुसलमान बनाया जा सका । इदारे दोनों ही सरकार द्वारा चलाए जा रहे थे और वे तनहा मुसलमान लड़कियाँ नहीं थीं बल्कि 3, 4 प्रतिशत होते हुए भी उनके रहने-सहने और खाने-पीने के इंतिज़ाम से लेकर वहाँ दी जानेवाली तालीम और तरबियत ने उनका मिज़ाज बदलकर रख दिया था और यह सिर्फ़ चंद सालों का असर था ।

जज़्बाती नहीं अमली अंदाज़ में सोचिए

आप जज़्बाती होकर यह कह सकते हैं कि हुकूमत को ऐसे इदारों में मुस्लिम लड़कियों और औरतों के लिए अलग से इंतिज़ाम करना चाहिए । लेकिन यह सिर्फ़ आपकी जज़्बातियत है । हुकूमत कभी इन लाइनों पर नहीं सोचती जिनपर आप सोच सकते हैं । उसने इदारा क़ायम किया और अपने तौर पर सारे समाज की भलाई के लिए तरह-तरह की सहूलतें दीं । अब यह वहाँ के ज़िम्मेदारों का काम है कि वह मुसलमान लड़कियों को मुस्लिम समाज की अमानत समझें, सिख लड़कियों को सिखों की और हिन्दू या ईसाई लड़कियों को हिन्दू या ईसाई समाज को वापिस करें । हम हरगिज़ यह नहीं चाहते कि ग़ैर मुस्लिम लड़कियाँ मुसलमानों को सौंप दी जाएँ लेकिन यह बहरहाल पसँद करेंगे कि मुसलमान लड़कियाँ मुसलमान नौजवानों को दी जाएँ, इसलिए कि उनका सही मक़ाम मुस्लिम समाज ही है और ऐसे लोगों

की कमी नहीं जो इन बेसहारा लड़कियों को सहारा दे सकें ।

मेरा अपना निजी तजुर्बा तो यह है कि दूसरों के मुक़ाबले में मुस्लिम समाज ने इन बिगड़ी हुई लड़कियों को ठीक करके अपने अन्दर समा लेने में कहीं ज़्यादा जोश-ख़रोश दिखाया है । यहाँ तक कि एक ज़माने में इन इदारों की मुसलमान लड़कियों के लिए जितनी तेज़ी से मुसलमान लड़कों से शादी का इंतिज़ाम किया गया उसको देखकर कई ऐसी लड़कियों ने आग्रह किया कि वे भी मुसलमान हैं जिनका नाम रजिस्ट्रों और फ़ाइलों के मुताबिक़ मुसलमानों जैसा न था । जब वहाँ के ज़िम्मेदारों ने मजिस्ट्रेट के सामने उनका बयान लिया तब भी वह इसी पर अड़ी रहीं कि वे मुसलमान हैं और मुसलमानों से शादियाँ करना चाहती हैं ।

करने का काम

हमारी बदक़िस्मती यह है कि हम अपनी जाइज़ और नाजाइज़ ख़ुशियों के लिए तो लाखों रुपये लुटा सकते हैं, लेकिन किसी ऐसे मुस्लिम संगठन या जमाअत को जनसाधारण के कामों के लिए हर साल चंद हज़ार रुपये भी नहीं दे सकते जिसकी ईमानदारी पर शुबहा बहरहाल किसी को नहीं । लगभग सभी शहरों में चंद तत्कालीन समस्याएँ बड़े ज़ोर-शोर से सिर्फ़ इसी वजह से पैदा हो रही हैं कि साधनों और ज़रियों की कमी रुकावट बन रही है । मुसलमानों के लिए एक बड़े मुसाफ़िरख़ाने, मुसलमान लड़कियों के लिए एक अच्छे कॉलेज, मुसलमान लड़कों और लड़कियों के लिए कुछ और स्कूल और तरबियती इदारे, बिना सूदी क़र्ज़ देनेवाले इदारे, प्रौढ़ शिक्षा के लिए केन्द्रों और ऐसे ही समाज सेवी इदारों की बड़ी ज़रूरत है । मुसलमान इतने ग़रीब भी नहीं कि वह इन सारे इदारों के लिए आवश्यक पूँजी इकट्ठा न कर सकें । लेकिन रोना तो हर शख़्स रोता रहता है और रोज़ ही मुस्लिम उर्दू अख़बारों में सँपादकीय लिखे जाते हैं, लेकिन न कोई मालदार आगे बढ़कर माल इकट्ठा करता है और न ऐसे लोग आगे बढ़कर अपनी ख़िदमात पेश करते हैं, जो माल न सही मगर सलाहियत रखते हैं ।

बच्चों और औरतों के लिए साहित्य

लड़कियों और औरतों के लिए ऐसे साहित्य की कमी महसूस होती है जो इस्लामी हदों का पाबन्द भी हो और दिलचस्प भी । स्कूलों में पढ़नेवाली लड़कियों के लिए तो उर्दू में ही नहीं शायद हिन्दी और अंग्रेज़ी में भी कोई ऐसी साप्ताहिक, अर्धमासिक या मासिक पत्रिका प्रकाशित नहीं होती जो स्तरीय हो और उन्हें इस्लाम की तालीमात से उतने ही दिलचस्प अंदाज़ में अवगत करा सके जितनी दिलचस्प

दूसरी पत्रिकाएँ और मासिक हैं । फ़िल्मी, ज़ासूसी, अफ़सानवी और ऐतिहासिक मासिक पत्रिकाओं की किसी ज़बान में कमी नहीं । लेकिन हिन्दुस्तान में छपनेवाली दो-तीन मासिक पत्रिकाओं को छोड़कर उनमें से शायद किसी को एक ग़ैरतमंद मुसलमान अपनी बच्ची के हाथ में दे सके । दो-एक मासिक पत्रिकाएँ बड़ी हद तक बेहतर प्रकाशित होने लगी हैं, उन्हें भी ज़्यादा दिलचस्प और मुफ़ीद बनाने के लिए धन और मेहनत की ज़रूरत है ।

स्कूल में दी जानेवाली तालीम के बुरे प्रभावों से बचाने के लिए यह मासिक पत्रिकाएँ बहुत काम कर सकती हैं ।

बिगाड़ के रास्ते

"(औरतें) अपना बनाव-सिंगार ज़ाहिर न करें, मगर इन लोगों के सामने : शौहर, बाप, शौहरों के बाप, अपने बेटे, शौहरों के बेटे, भाई, भाइयों के बेटे, बहनों के बेटे, अपने मेलजोल की औरतों, अपने नौकरों, वे मर्द जो आपके अधीन हों और किसी क़िस्म की ग़र्ज न रखते हों और वे बच्चे जो औरतों की गुप्त बातों से अभी परिचित न हों ।" —क़ुरआन

"बचाओ अपने आपको और अपने परिवार को उस आग से जिसका ईंधन इनसान और पत्थर होंगे ।" —क़ुरआन

बहुत-से बच्चे क्लास में कमज़ोर होते है । कभी यह कमी किसी एक विषय में होती है और कभी-कभी लगभग सारे ही विषयों में बुरा हाल होता है ।

तरक़्क़ी या बरबादी

हमारा आजकल का तालीमी ढाँचा जितना अधूरा है उसकी शिकायत हरेक को है । न शिक्षक पढ़ाने को अपना फ़र्ज़ समझकर निभाते और न लड़के पढ़ने में कोई दिलचस्पी लेते । लेकिन यह अजीब बात है कि जब मसला ख़ुद हमारे बच्चों का होता है तो हम अपनी सारी कोशिशें इस मक़सद के लिए लगा देते हैं कि बच्चे अगली क्लास में पहुँच जाएँ, चाहे थर्ड डिवीज़न में ही क्यों न पास हों, या तरक़्क़ी (Permotion) देकर आगे बढ़ा दिए जाएँ । बहुत-से बच्चे अपनी शैक्षणिक योग्यताओं के आधार पर अगली क्लास में जाने के योग्य नहीं होते । उनको हर साल अगली क्लास में तरक़्क़ी दिलवाने से आप उसका एकाध साल तो हो सकता है बचा ले जाएँ लेकिन उसकी ज़िन्दगी ज़रूर बरबाद कर देंगे । वह हमेशा फिसड्डी, झगड़ालू और मंदबुद्धि कहलाएँगे चाहे हक़ीक़त उसके विपरीत ही क्यों न हो ।

पिछला पाठ और होमवर्क

तालीमी एतबार से आप ख़ुद चाहे किसी क्लास में क्यों न हों अगर सिर्फ़ इतना ध्यान रखें कि बच्चे रोज़ाना स्कूल से वापस आकर अपना सबक़ ध्यान से दुहरा लें और घर के लिए दिया हुआ काम पूरा कर लें तो शायद आपको कभी ट्यूशन पढ़वाने की ज़रूरत महसूस न होगी ।

हम अपने तौर पर और कभी बच्चों की ज़िद पर उनके लिए अलग से ट्यूटर का इंतिज़ाम कर देते हैं । आमतौर से इसमें बहुत कुछ हाथ होता है क्लास में पढ़ानेवाले टीचरों की उस हवस का कि वह बच्चों से ट्यूशन फ़ीस के तौर पर कुछ रक़म ऐंठ सकें । अब तो ट्यूशन पढ़ाने का रिवाज इतना आम हो चला है कि यह घरेलू बजट का एक ज़रूरी हिस्सा बन गया है ।

मर्द ट्यूटर

अपनी लड़कियों के लिए अगर आपको ट्यूटर की बहुत ज़्यादा ज़रूरत महसूस हो तो भी मर्द ट्यूटर किसी क़ीमत पर न रखें । मैं तो इस हद तक जाने को तैयार हूँ कि अगर कोई मर्द ट्यूटर आपका मुलाक़ाती ही नहीं, दोस्त या नामहरम (जिससे शादी हो सकती हो) रिश्तेदार हो तो भी अपनी बच्ची को उसे न सौंपें । कम उम्र की बच्चियों का ज़िहन कच्चा होता है और बड़ी उम्र के तजुर्बेकार ट्यूटर उसे आसानी के साथ प्रभावित कर लेते हैं । आमतौर पर उस्ताद जल्द ही ग़लत ख़यालात दिल में लाने लगता है । (उन ट्यूटरों से माफ़ी माँगते हुए जो वास्तविक तौर पर अपने पद के योग्य हैं और अपना फ़र्ज़ निभाते हैं लेकिन जिनकी तादाद अब हज़ार, दो हज़ार में एक-दो से अधिक नहीं) । बहुत-से ख़ानदान तो ट्यूटर तलाश करते वक़्त शायद ज़िहन में भी यही बात रखते हैं कि लड़की को शौहर मिल जाए । अपहरण की बहुत-सी घटनाओं में भी ट्यूटर और उस्ताद का हाथ होता है । किसी भी दैनिक अख़बार के कॉलमों से आपको इसके अनगिनत हवाले दिए जा सकते हैं ।

बहुत-से ख़ानदानों में शुरू में तो यह सावधानी बरती जाती है कि ट्यूशन के समय घर की कोई औरत लड़की के साथ ही बैठती है, लेकिन चंद ही दिनों में लापरवाही, हद से ज़्यादा एतमाद या व्यस्त होने के कारण यह इंतिज़ाम ढीला पड़ जाता है और बात फिर वहीं आ पहुँचती है जिसकी तरफ़ मैंने ऊपर इशारा किया है । मैं ऐसी बहुत-सी घटनाओं से निजी तौर पर वाक़िफ़ हूँ, अकसर हालतों में माँ-बाप ने बदनामी के डर से ट्यूटर के साथ शादी मंज़ूर कर ली । सिर्फ़ एक ऐसी घटना मेरे ज़िहन में महफ़ूज़ है जब उस्ताद ने शराफ़त का लिहाज़ करते हुए शादी की पेशकश की (जिसे रद्द कर दिया गया) वरना बाक़ी सारी घटनाएँ या तो अपहरण के केस बने या घरवालों को पता चल जाने की वजह से बेल मंढ़े न चढ़ सकी ।

घरेलू नौकर

बच्चियों को स्कूल पहुँचानेवाले मर्द नौकर भी उसी दायरे में आते हैं, जिनकी

तरफ़ से आँखें बंद करना ख़तरनाक साबित हो सकता है । ऐसी बहुत-सी घटनाओं से अपने तौर पर आप भी वाक़िफ़ होंगे जिनमें घरेलू नौकर, रिक्शा, तांगेवाले या निजी मोटर ड्राईवर ने उसी घर की लड़कियों को अपनी वासना का निशाना बनाया जहाँ वह मुलाज़िम थे और घरवाले सिर पकड़कर रह गए । आप अपने आस-पास नज़र दौड़ाएँ तो आप ख़ुद ही ऐसी कई घटनाएँ अपनी आँखों से देख सकते हैं ।

स्कूल की सहेलियाँ

स्कूल में क्लासें शुरू होने से बहुत पहले भेजने या स्कूल बन्द हो जाने के बाद ज़्यादा देर तक वहाँ रुके रहने में भी आपत्ति है । लड़कियों के स्कूलों में आजकल ऐसी लड़कियों की कमी नहीं जो अपनी उम्र से कहीं आगे होती हैं । ये तजुर्बेकार लड़कियाँ अपनी क्लास ही की नहीं अपनी हम उम्र सारी लड़कियों के लिए 'ज़हर' की हैसियत रखती हैं । ये सीधी-साधी लड़कियों को जो दूसरे शब्दों में उन बातों से नावाक़िफ़ होती हैं, बड़ी जल्दी अपने जाल में फाँस लेती हैं । अपने ज़ाती तजुर्बों को जब ये इंतिहाई चटपटे अंदाज़ में अपनी सहेलियों के सामने मज़े ले-लेकर बहुत विस्तार से बयान करती हैं तो बहुत-सी लड़कियाँ वही मज़ा लूटने के लिए ज़िहनी तौर पर तैयार हो जाती हैं, जो मज़ा ये चख चुकी हैं । इन भोली-भाली लड़कियों को अपनी ज़िन्दगी बहुत रूखी-फीकी लगती है और उसे मज़ेदार बनाने के जतन में बहुत-सी इन सारे मरहलों से गुज़रने के लिए तैयार हो जाती हैं जो कि एक लड़की के लिए खाई में छलाँग लगाने के बराबर है ।

आप अपनी लड़की की सहेलियों पर भी नज़र रखिए और अगर किसी के चाल-चलन के बारे में शुबहा होने लगे तो अपनी लड़की को उससे दूर रखने की कोशिश कीजिए ।

नामहरम[1] रिश्तेदार

> "और जब तुम्हारे बच्चे अक़्ल की हद को पहुँच जाएँ तो चाहिए कि उसी तरह इजाज़त ले कर आया करें; जिस तरह उनके बड़े इजाज़त लेते रहे हैं ।"
>
> —नूर

बहुत-से घरानों में ऐसे लड़कों के घरों के अन्दर आज़ादाना आने-जाने पर कोई पाबन्दी नहीं होती जो रिश्तेदार तो ज़रूर हैं, लेकिन नामहरम । हदीसों में तो भावज के लिए देवर को ज़हर ठहराया गया है और आपका यह हाल है कि

---

1. नामहरम : वे लोग जिनसे शादी की इस्लाम ने इजाज़त दी है ।

इस्लाम के स्पष्ट आदेशों की ख़िलाफ़वर्ज़ी करते हुए आप उन लड़कों के आने-जाने पर भी पाबन्दी नहीं लगातीं जो सिर्फ़ रिश्तेदार होते हैं । नामहरम रिश्तेदार लड़कों का आज़ादी से आना-जाना कुछ ज़्यादा सही नहीं और यह तो बिलकुल जाइज़ नहीं कि वे कि वे आपकी नौजवान लड़कियों के साथ हँसी-मज़ाक़ में हिस्सा लें या अकेले में उनके साथ घंटों बैठे बातें करते रहें । मरहम लोगों के घरों में दाख़िले पर इस्लाम ने कोई पाबन्दी तो नहीं लगाई है लेकिन उसे भी सीमित कर दिया है, केवल उन वक़्तों के लिए जब कोई वाक़ई ज़रूरत हो । बेज़रूरत सिर्फ़ हँसी-मज़ाक़ या फ़िज़ूल बातों के लिए लड़कियों का उनसे लगे बैठे रहना भी पसँदीदा नहीं । घर में कोई मर्द आए तो बच्चियों को सामाजिक अदबों का लिहाज़ करते हुए सलाम से आगे बढ़ने की ज़रूरत कभी-कभी ही पेश आती है । आप उन्हें उसका आदी बनाएँ । नामहरम रिश्तेदार लड़कों के साथ लड़कियों को कमरों में अकेले बैठना या बाहर घूमने की इजाज़त देकर आप ख़ुद अपने लिए मुश्किलें पैदा करेंगी ।

पड़ोसी और दोस्त

बहुत-से घरों में उन पड़ोसियों के लड़कों को महरम रिश्तेदारों जैसी हैसियत दी जाने लगती है जिनसे मेल-जोल अच्छे हों । सामाजिक ज़िंदगी में ख़ास तौर पर इस तरह की सूरते हाल महीनों और सालों तक साथ-साथ रहने की वजह से पैदा हो जाती है । हद से ज़्यादा भरोसा यूँ भी ठीक नहीं न कि आप अपने पड़ोसी के लड़कों के साथ अपनी लड़की के आज़ादाना मेल-जोल को नज़रअंदाज़ करती रहें और इस पर कोई पाबन्दी ही न लगाएँ । आम तौर पर आपकी लड़की के हम उम्र या कुछ बड़े पड़ोस के लड़के कभी-कभी ख़ासा दर्दे सर बन जाते हैं । उनके लिए मौक़े भी ज़्यादा होते हैं और चौबीस घंटे पड़ोस में साथ रहने की वजह से निगरानी का मसला भी सख़्त ही नहीं सँगीन होता है ।

ताक-झाँक

> "जिसने किसी के घर में झाँका और घरवालों ने उसकी आँख फोड़ दीं, तो उनपर कोई पकड़ नहीं ।"
> —हदीस

अक्सर आपके न चाहते हुए भी ताक-झाँक का मशग़ला जवान होती लड़कियों और लड़कों के लिए बड़ा महबूब होता है । स्कूल आते-जाते रास्ते के आवारा भी आपकी लड़की के लिए मसला बना सकते हैं । कम उम्र की लड़कियाँ आम तौर पर रास्ते में खड़े आवारागर्द लड़कों की मुस्कुराती निगाहों का असल मतलब नहीं समझ पातीं और अगर लड़की शक्ल और सूरत में ज़रा बेहतर है तो उसे

यूँ भी अपने हुस्न का ग़ुरूर होता है । रास्ते में आँखें बिछानेवाले जल्द ही विभिन्न तरीक़ों से उसे अपनी तरफ़ मुतवज्जह कर लेते हैं ।

इस सिलसिले में सिर्फ़ दो मिसालें देने पर सँतोष करूँगा । एक अच्छे-ख़ासे दीनदार घर की लड़की, जो इत्तिफ़ाक़ से पढ़ने के लिए स्कूल भी नहीं जाती थी, अपने पड़ोसी लड़के से आँख लड़ा बैठी । कई साल तक यह सिलसिला जारी रहा, लेकिन शुबहा कभी यक़ीन की हद तक नहीं पहुँच सका; इसलिए कि दोनों ख़ासे कम उम्र थे । कुछ दिनों बाद जब लड़की के माँ बनने के आसार नमूदार हुए तो लड़की के घरवालों के होश उड़ गए । ग़नीमत यह हुआ कि लड़के के माँ-बाप शादी के लिए तुरन्त तैयार हो गए, वरना जितनी बदनामी हुई थी उससे कहीं ज़्यादा होती । वजह क्या थी ? सिर्फ़ माँ-बाप की तरफ़ से एहतियात में कमी और पड़ोस के लड़कों पर हद से ज़्यादा भरोसा ।

इसी तरह का दूसरा हादसा एक लड़की का है जो स्कूल आते-जाते एक ख़ुश-शक्ल दुकानदार के चक्कर में आ गई । घरवाले ख़ासे खाते-पीते लोग थे । आहिस्ता-आहिस्ता यह हुआ कि घर से लड़की स्कूल के बहाने आती और उस दुकानदार के साथ अलग-अलग जगहों पर घूमती-फिरती । दुकानदार माली लिहाज़ से बहुत अच्छी पोज़ीशन का मालिक नहीं था, लेकिन था ख़ासा चालाक । उसने लड़की से पैसे भी ऐंठे और उसकी इज़्ज़त से भी खेलता रहा । जब दिल भर गया तो उसे यह कहकर धुतकार दिया कि मेरी बीवी मौजूद है, मैं दूसरी शादी करने से रहा ।

कॉलेजों और स्कूलों में होनेवाले मिले-जुले इज्तिमाओं या ऐसे फ़ंक्शन जिनमें बाहर के मर्दों को आम शिरकत की दावत दी जाती है, अपनी चमक-दमक से न सिर्फ़ लड़कियों की नज़रों को चकाचौंध कर देते हैं बल्कि उनके ज़िहन को गंदा भी । रही-सही कसर उस वक़्त पूरी हो जाती है जब आप ख़ुद सिनेमा देखते हों या सस्ते गंदे नाविलों और बाज़ारी पत्रिकाओं में दिलचस्पी रखते हों ।

गंदी किताबें और पत्रिकाएँ

अमली बिगाड़ के लिए रास्ता हमवार होता ही उस वक़्त है जब इनसान का ज़िहन पहले से उसके लिए आमादा हो । ज़िहनी बिगाड़ पैदा करने में फ़िल्मी पत्रिकाएँ, गंदे नाविल और नंगी तस्वीरें चाहे वे कैलेंडरों पर बनी हों या फ़िल्म स्लाइड पर और इश्तिहारों में, बहुत अहम रोल अदा कर रही हैं ।

सस्ते नाविल घर

आजकल हर गली-कूचे में किराए पर सस्ते नाविल और अफ़साने उपलब्ध

करानेवाली दुकानें बहुत मिल जाती हैं । अपनी दुकानदारी जमाने या ज़्यादा से ज़्यादा कमाने के चक्कर में ये लोग 12-14 बरस के लड़कों और लड़कियों के हाथ में ऐसी गंदी किताबें दे देने से नहीं हिचकिचाते जिनको कोई बड़ी उम्र का आदमी भी पढ़ते हुए शरमा जाए । इन गंदी किताबों के ख़रीदारों और पढ़नेवालों की अधिक सँख्या स्कूली लड़कों और लड़कियों की है । आपके घर में ये किताबें राह पा सकती हैं, बराहेरास्त न सही किसी पड़ोसी या सहेली के द्वारा ही सही ।

आप अपनी बच्ची के हाथ में कभी कोई ऐसी किताब या पत्रिका देखें जिसे वह आपसे छिपाकर पढ़ने की कोशिश कर रही हो तो समझ लीजिए कि वह इस रास्ते पर क़दम बढ़ा रही है । डाँट-डपट से काम लेने के बजाए उसे अच्छे स्तर की किताबें व पत्रिकाएँ उपलब्ध कराएँ । ऐसे नाविलों की तादाद भी कुछ कम नहीं है जो पाकीज़ा हों । कोशिश तो यही कीजिए कि बच्चों में नाविल पढ़ने का शौक़ ही पैदा न हो और अगर उनके हाथ में नाविल देना ही पड़े तो वह दीजिए जो उनके अख़लाक़ को न बिगाड़ें । फ़िल्मी रिसाले और अर्धनग्न इश्तिहारों या फ़ोटो प्रकाशित करनेवाली पत्रिकाएँ और अख़बार भी उसी कोटि में शामिल हैं, जिनके इस्तेमाल से आप ख़ुद परहेज़ कीजिए और बच्चों को भी बचाइए ।

सिनेमा

सिनेमा हरगिज़ न देखिए । मैं तो आपको यही राय दूँगा चाहे आप मुझे कितना ही दक़यानूसी और पिछड़ा हुआ क्यों न कहें । सिनेमा के पर्दे पर नज़र आनेवाली हीरोइन अपने अर्धनग्न लिबासों और अदाओं में कितनी भी दिलफ़रेब और नज़र को मोह लेनेवाली क्यों न हो, मुझे यक़ीन है कि आज के तरक़्क़ी पाए हुए दौर में भी ऐसे मुसलमान माँ-बाप कम ही मिलेंगे जो अपनी जवान लड़की को उसी लिबास और उसी पोज़ में अमलन एक भरी-पुरी सड़क पर खड़ा करने के लिए तैयार हों ।

अगर आप इसके लिए किसी क़ीमत पर तैयार नहीं कि आपकी जवान बेटी या बहन सड़क पर अर्धनग्न या नंगी अपने जिस्म की नुमाइश करती फिरे और लोग उसके एक-एक अँग को जी भरकर देखें जिसको ख़ुद आपने अपने हाथों से क्रीम, पाउडर और सुर्ख़ी ग़ाज़ा लगाकर सँवारा हो तो आख़िर आपकी ग़ैरत उस वक़्त क्यों मर जाती है, जब आप दूसरों की बेटियों और लड़कियों को उसी लिबास में देखने सिनेमा घर पहुँचते हैं ।

मान लीजिए आप सिनेमा देखते हैं और इस आदत को छोड़ने के लिए तैयार भी नहीं, चाहे यह इस्लाम के हुक्मों के ठीक विपरीत ही क्यों न हो, तो भी आप

को यही मशविरा दूँगा कि आप अपने लड़कों और लड़कियों को अपने साथ हरगिज़ न ले जाएँ और न ही उन्हें इसका आदी होने दें। (वैसे बज़ाहिर अमलन यह मुमकिन नहीं। आख़िर वह कौन-सा तर्क है जिसके तहत सिनेमा देखने को आप ख़ुद अपने लिए जाइज़ क़रार दें और अपने बच्चों को उससे बचने की नसीहत करें।)

अगर आप इसी पर अड़े हैं कि आप सिनेमा देखेंगे और कभी-कभार बच्चों के देखने पर भी पाबन्दी नहीं लगाएँगे तो फिर आप जानें और आपका काम। मैं तो इस मरहले पर भी आपके पैरों में यह ज़ंजीर डालना चाहूँगा कि अगर आप अपनी लड़कियों को सिनेमा दिखाने पर अड़े ही हैं तो अपने साथ ले जाइए और अपने साथ ही वापस ले आइए। रास्ते में फ़िल्म के विषय से हटकर किसी चीज़ पर बातचीत कीजिए ताकि ज़िहन से कहानी और फ़िल्म के दृष्य का असर किसी हद तक तो दूर हो जाए। लेकिन इस सबके बावजूद आप फ़िल्म के बुरे असरों से बच जाएँ यह नामुमकिन है। अल्लाह आपकी हिफ़ाज़त करे और सही अक़्ल अता करे।

लड़कियों और औरतों को तनहा फ़िल्म देखने की इजाज़त देने या किसी ऐरे-ग़ैरे के साथ घूमने पर पाबंदी न लगाने का जो नतीजा निकलता है वह हम रोज़ ही देखते रहते हैं। फ़िल्में रोज़-बरोज़ गंदी होती चली जा रही हैं और तमाशा देखनेवाले को तब भी तसकीन नहीं मिलती। सिनेमा घरों के बकसों (Boxes) में जो कुछ होता रहता है अगर उसके दरो दीवार गवाही दे सकें तो आप अपनी सारी "तरक़्क़ी पसंदी" के बावजूद दाँतों में अँगुलियाँ दबा लेंगे।

अपनी आँखें खुली रखिए

"अगर तुम अल्लाह से डरनेवाली हो तो दबी ज़बान से बात न किया करो कि दिल की ख़राबी में मुबतला कोई शख़्स लालच में पड़ जाए, बल्कि साफ़-सीधी बात करो ।" —क़ुरआन

"(मुसलमान औरतें) ज़मीन पर इस तरह पाँव मारती हुई न चलें कि जो ज़ीनत उन्होंने छुपा रखी है उसका इल्म लोगों को हो ।" —क़ुरआन

ग़ैर महसूस तबदीली

लड़की जब 12-13 साल की उम्र को पहुँचने लगती है तो वह मक़ाम आ जाता है, जब वह ख़ुद परदे का पाबंद होना पसंद करती है । जिस्मानी तबदीलियों के शुरू होते ही लड़की में शर्मो ग़ैरत का माद्दा बहुत बढ़ जाता है । कल तक जिन हम-उम्र बच्चों के साथ वह बिना किसी झिझक के खेलती रही है उन्हीं से हिजाब महसूस करने लगती है । सबके सामने नज़रें झुक जातीं हैं । वह बदन को चुराने और नज़रें बचाने लगती है । यहाँ तक कि अपने माँ-बाप के सामने भी उस बेबाकी से परहेज़ करने लगती है जो अब तक उसकी तबीयत का ख़ास्सा थी । यह किसी एक समाज या मज़हबी और नसली क़ौमियत का असासा नहीं, बल्कि आम इनसानी फ़ितरत है जिसका मुज़ाहिरा दुनिया के हर कोने में, हर जगह और हर आबो हवा में होता है चाहे वह हिन्दुस्तान और जापान हो या फ्रांस, ब्रिटेन हो या अमेरिका, तरक़्क़ी पाया हुआ यूरोप हो या पिछड़ा हुआ अफ़्रीक़ा ।

आपने ख़ुद बार-बार यह देखा होगा कि इंतिहाई बेबाक लड़कियों और औरतों को भी अगर कोई मर्द घूरने लगे तो वे नज़रें झुका लेती हैं । उनके जिस्म का कोई हिस्सा अगर खुल गया हो तो उसे ढाँपने की कोशिश करती हैं और अगर उनके कपड़े ज़्यादा खुले हों तो भी बदन को इस तरह चुरा लेती हैं कि जिस्म के नुमायाँ हिस्सों की नुमाइश कम से कमतर हो सके । अगर ज़्यादा ग़ुस्सा आ जाए तो हिम्मत करके डाँट देने में भी देर नहीं करतीं ।

हमारे पड़ोस में एक ग़ैर मुस्लिम लड़की जो कभी-कभी मेरी बहनों के पास भी कढ़ाई-बुनाई सीखने के लिए आ जाया करती थी, उम्र के उस हिस्से में पहुँचने के बाद स्कूल आते-जाते ख़ासी परेशान हुई रास्ते में बहुत-सी घूरनेवाली आँखें और परेशान करनेवाले लड़कों से ।

मेरी बहनों को बुर्क़ा ओढ़ते देखकर एक दिन उसने अपने माँ-बाप से ज़िद की कि उसे भी बुर्क़ा बनवा दिया जाए । माँ ने उसे बहुत समझाया कि बेटी बुर्क़ा तो "मुसलमानियाँ" ओढ़ती हैं, लेकिन उसका कहना था कि उससे क्या हुआ । लड़के मुझे घूरते और परेशान करते हैं । बुर्क़े से यह मुसीबत तो ख़त्म होगी । बुर्क़ा तो क्या बनता लेकिन इसका इक़रार उसके माँ-बाप ने भी किया कि मुसलमानों का यह पहनावा शरीफ़ लड़कियों के लिए बहुत मुनासिब है ।

शर्म व हया

"हया ईमान का हिस्सा है ।" —हदीस

"बेहयाई हर चीज़ को बुरा बना देती है ।" —हदीस

हर लड़की के अन्दर शर्म व हया का एहसास होता है और यह उसका सबसे क़ीमती ज़ेवर है । आप भी उसका यह धन उससे छीनने की हरगिज़ कोशिश न करें । यूँ तो आप ख़ुद भी बहुत हिसवाले हैं लेकिन मैं, याद रखने के लिए ही सही, यहाँ फिर दुहरा दूँ कि आप बच्चों के बड़े होने के बाद उनके सामने कोई ऐसी बात न करें जो उन्हें बेग़ैरत और बेशर्म बना दे । बहुत-से माँ-बाप और ख़ास कर माँए अपने 10-12 साल के बच्चों के सामने नहाने या कपड़ा बदलने में बेहतियाती, बल्कि कभी-कभी बेशर्मी का मुज़ाहिरा करती हैं ।

छोटे मकान

जहाँ मकान की कमी है वहाँ यह बात बहुत मुश्किल हो जाती है कि माँ-बाप का कमरा बच्चों के कमरों से अलग हो । बड़े शहरों में ख़ास तौर पर बहुत-से ख़ानदान एक ही कमरे में गुज़र करने पर मजबूर हैं । लेकिन इसके बावजूद आपकी तरफ़ से हर मुमकिन एहतियात ज़रूरी है । शौहर और बीवी के ताल्लुक़ात भी बड़ी एहतियात चाहते हैं । बच्चों के सामने या उनके जागते हुए आप कोई ऐसी हरकत न करें जो उन्हें कम उमरी ही में उन बातों की तरफ़ मुतवज्जोह कर दे जिनका इल्म जवान होने के बाद भी बहुत आहिस्ता-आहिस्ता होता है ।

बच्चियों में हया का एहसास उभारें, अगर आपने बेजा दबाव या हद से ज़्यादा लाड-प्यार में उनकी आदतें बिगाड़ नहीं दी हैं, तो लड़की खुद ही ग़ैर महसूस तौर पर 'परदा' करने के लिए तैयार होती जाएगी । देखिए, मुझे आपके 'रूढ़िवादी' के ताने की ज़रा भी परवाह नहीं; आप पहले मेरी पूरी बात तो सुन लीजिए । मैं न सिर्फ़ 'परदे' का क़ायल हूँ, बल्कि यहाँ अपनी मिल्ली सुरक्षा की कोशिशों में इसकी पाबंदी को ज़रूरी समझता हूँ ।

प्रचलित बुर्क़ा

मैं आपको न तो यह मशविरा दे रहा हूँ कि आप अपनी लड़की को 12-13 साल की उम्र में ज़रूरी तौर पर प्रचलित बुर्के का पाबन्द बना दें और न ही उन लोगों से सहमत हूँ जो बुर्के को अनावश्यक और बेकार चीज़ कहते हैं ।

इस्लाम ने परदे की सीमाएँ नियत की हैं । अल्लाह ने 'तबर्रुज' यानी नाज़ो अदा के साथ लचके खाते और इठलाते हुए चलने से मना किया है और इससे भी मना किया है कि औरत अपने जिस्म और लिबास के हुस्न को इस तरह नुमायाँ करे जिससे दूसरे मर्दों को उसकी तरफ़ रग़बत हो । जिस ज़माने में प्रचलित बुर्के को मुस्लिम समाज ने अपनाया था उस वक़्त के हालात में शायद उससे बचने का कोई रास्ता न रहा हो, लेकिन ज़रूरी नहीं कि हर हालत में प्रचलित बुर्के का इस्तेमाल ज़रूरी ठहराया जाए और उसमें जो ज़रा-सी जाइज़ ढील को भी लान-तान का निशाना बनाया जाए ।

इस्लाम ने परदे का मक़सद यही बताया है कि औरत की ज़ेबो ज़ीनत का खुले आम सड़कों पर और गलियों में इज़हार न हो और समाज उन बुराइयों से महफ़ूज़ रह सके जो औरतों और मर्दों के आज़ादाना मेल-जोल से पैदा होती हैं । परदे अपनाकर औरतें मर्दों के बुरे विचारों और उनकी बुरी नज़रों से बड़ी हद तक महफ़ूज़ हो जाती हैं । इस्लाम ने सिर्फ़ ख़ूबसूरत या जवान औरतों के लिए ही परदा का हुक्म नहीं दिया है, बल्कि बड़ी उम्र की औरतों को भी इसका पाबन्द बनाया है । अलबत्ता उन्हें अपेक्षाकृत कुछ ज़्यादा सहूलतें दी गई हैं ।

बिना ज़रूरत घर से बाहर न निकलें

> "जो औरत इत्र (ख़ुशबू) लगाकर रास्ते से गुज़रे, ताकि लोग उसकी ख़ुशबू से आनंदित हों, तो वे ऐसी और ऐसी हैं ।" —हदीस

लड़कियाँ जब बालिग़ होने को हों तब इस मक़सद को सामने रखते हुए विभिन्न तरीक़े इख़तियार किए जा सकते हैं । प्रथम तो लड़कियों को ज़रूरत के बिना घरों से निकलना ही नहीं चाहिए और अगर किसी मजबूरी में घर से बाहर जाना ही पड़े तो इस तरह कि उनका लिबास दूसरों की नज़रें अपनी तरफ़ न खींचे और अपनी चाल-ढाल से या इशारों से बात करके दूसरों को अपनी तरफ़ मुतवज्जोह करने के बजाय कोशिश यह हो कि जिस ज़रूरत के तहत घर से बाहर निकलें, उसके पूरा होते ही वापस आ जाएँ ।

सड़कों पर मटरगश्ती

"तुम्हारे (औरतों के) लिए सड़क के बीच में चलना ठीक नहीं, किनारे पर चलो।" —हदीस

आप ज़रा किसी बड़े शहर के बाज़ार में थोड़ी देर के लिए निकल जाएँ। हर तरफ़ बुर्क़ापोश औरतों का हुजूम नज़र आएगा। मेरी जानकारी में उनकी अक्सरियत इस्लाम के हुक्मों की खुले तौर पर ख़िलाफ़वर्ज़ी करती है, चाहे बज़ाहिर वह बुर्क़ा पहने हुए क्यों न दिखाई देती हों। उनमें से बहुत-सी तो सिर्फ़ दिल बहलाने के लिए घरों से निकल पड़ती हैं। कुछ जिन्हें वाक़ई मजबूरन सौदा-सुलफ़ लेने या किसी ज़रूरी घरेलू काम से निकलना पड़ा है, हँसी-ठटोल करती और ग़ैर मर्दों से बिना ज़रूरत लहक-लहककर बातें करती घूमती हैं। बुर्क़ा हवा में लहराता रहता है और बेमक़सद मटरगश्ती जारी रहती है। बिना किसी महरम के तनहा घूमना और उसपर भी ऐसे रंग-बिरंगे बुर्क़े जो यूँ ही ध्यान का केन्द्र बन जाते हैं। ये सारी बातें परदे के मक़सद ही को समाप्त कर देती हैं।

शहरी इलाक़ों में रहनेवाली मुस्लिम औरतों में आम तौर पर यह सारी बुराइयाँ बड़ी तेज़ी से समाती जा रही हैं और इसका सबब सिर्फ़ यह है कि उन्हें परदे की सही इस्लामी सीमाओं का पता नहीं। उन्हें तो माँ-बाप ने प्रचलित बुर्क़े की पाबन्दी सिखा दी और बुरा-भला उन्होंने बुर्क़ा ओढ़ लिया और समझ लिया की यही काफ़ी है। आप ख़ुद भी परदे की सही इस्लामी हदों से की जानकारी हासिल कीजिए और अपनी बच्चियों को उन हदों का पाबन्द बनाइए।

परदे की सही हदें

"अपने घर में टिककर रहो और पिछली जाहिलियत के ज़माने की सज-धज न दिखाती फिरो।" —क़ुरआन

मुहतरमा! परदे का मतलब हरगिज़ यह नहीं कि आप रंग-बिरंगे बुर्क़े पहनकर पार्कों में चहल क़दमी या सड़कों पर मटरगश्ती के लिए निकल खड़ी हों और सिनेमा देखने जाएँ तो बुर्क़ा ओढ़कर। यह कैसा बुर्क़ा है जिसे पहनकर आप दुनिया की हर बुराई से अपने को महफ़ूज़ समझ लेती हैं। यहाँ तक कि आप सिनेमा के परदे पर उन गंदे दृश्यों और नंगी तस्वीरों को पूरी दिलचस्पी से देखने में भी कोई बुराई नहीं समझतीं जिनका अमली मुज़ाहिरा करते आप को घर की चार दीवारी में भी शर्म आ जाएगी।

क़ुरआन पाक और हदीसों में परदे के बारे में दी गई हिदायतों का उद्देश्य बिलकुल स्पष्ट है। इस्लाम को मर्दों और औरतों का आज़ादाना मेल-जोल किसी क़ीमत

पर मंज़ूर नहीं । वह नामहरमों से ही नहीं महरमों के सामने भी आप को ऐसी हालत में देखना पसंद नहीं करता जो दिलों में वस्वसा पैदा करे । इस मक़सद के लिए वह सारे चोर दरवाज़े बंद कर देना चाहता है ।

आप ख़ुद परदे के सिलसिले में इस्लाम के स्पष्ट आदेशों की पाबंदी करें । बदन ढकनेवाले लिबास पहनें, कपड़े न बहुत बारीक हों और न ज़्यादा चुस्त या खुले हुए । बच्चियों का ज़िहन भी ऐसा बनाइए कि उन्हें बदन ढकनेवाले लिबास की ज़रूरत और अहमियत का एहसास रहे और ऐसे कपड़े पहनने में उन्हें न सिर्फ़ कोई झिझक या कमज़ोरी महसूस हो, बल्कि अधनंगे लिबास पहननेवालों के सामने वे गर्व से सिर ऊँचा कर सकें ।

माध्यमिक कक्षाएँ

चौदह-पंद्रह साल की उम्र में लड़की हायर सेकण्डरी कक्षाओं तक पहुँच जाती हैं । आपकी लड़की को अभी और तालीम पाने के लिए स्कूल जाना है । यक़ीनन भेजिए । लेकिन कोशिश कीजिए कि घर के क़रीब से क़रीब स्कूल में दाख़िला मिल जाए । सहशिक्षा के स्कूलों और कॉलेजों में हरगिज़ न भेजिए । उनकी ज़ाहिरी चमक-दमक अमूमन सभी को बड़ी दिलफ़रेब लगती है ।

मख़्तूल तालीमी इदारे (सहशिक्षावाले इदारे)

मैंने न सिर्फ़ अपने तालिबे इल्मी के ज़माने के कई साल सहशिक्षा के इदारों में गुज़ारें हैं, बल्कि अपने शिक्षण का सारा समय उन्हीं इदारों में गुज़ारा है । कभी डिग्री कॉलेजों में, कुछ साल एक यूनिवर्सिटी में और अब तकनीकी इदारे में मुझे सहशिक्षा के हामियों में से कोई भी ऐसा नहीं मिला जो वाक़ई उसे हिन्दुस्तान के मौजूदा माहौल में मुफ़ीद और ज़रूरी समझता हो । जो ज़्यादा पुरजोश हैं वे कुछ लचर-सी दलीलें ज़रूर पेश करते हैं । लेकिन उनका दिल अन्दर से ख़ुद उनपर मुतमइन नहीं होता । बहुतेरे लोग वही मिले जो इसमें सौ कीड़े निकालते हैं । सहशिक्षा के पुरजोश हामियों के सामने ख़ुद उनकी क्लासों में पढ़नेवाली लड़कियाँ इसके कड़वे कसैले फल पेश करती हैं तो वे सिर्फ़ बग़ले झाँकने लगते हैं, बल्कि बड़ी तलख़ी से उसकी बुराइयाँ भी गिनवाते हैं ।

हमारे यहाँ जिन तालीम के माहिरों ने इस तजुर्बे को बढ़ावा दिया है वह पश्चिमी देशों के मूल्यों से मरऊबियत और उनकी अंध-भक्ति से ज़्यादा कुछ नहीं । ख़ुद पश्चिमी मुल्कों में सहशिक्षा के ज़हरीले प्रभाव की शिद्दत का एहसास बढ़ता जा रहा है और अपनी तमाम तर बेबाकी के बावजूद वहाँ भी मुख़ालिफ़त में आवाजें

उठने लगी हैं ।

बच्चियों को अकेले स्कूल न भेजिए

क़रीब के स्कूल तक भी अपनी लड़की को अकेले न जाने दीजिए । अगर मुमकिन हो तो उसके लिए आप ख़ुद थोड़ा-सा वक़्त निकालिए और उसे स्कूल तक पहुँचा दीजिए । यक़ीनन आप बहुत मसरूफ़ हैं, लेकिन इस अहम काम के लिए भी चंद मिनट आप अपनी मसरूफ़ियत का लाज़मी जुज़ बना लीजिए ।

ध्यान रखिए कि इस तरह लड़की को अपने साथ स्कूल पहुँचाने का मक़सद उसकी इज़्ज़ते नफ़्स को ठेस पहुँचाना या उसके अन्दर यह एहसास पैदा करना नहीं है कि आप उसपर भरोसा नहीं करतीं । उसका मक़सद सिर्फ़ इन चोर दरवाज़ों को राह करना है जिनसे बुराइयाँ राह पाती हैं ।

आप वक़्त नहीं निकाल सकतीं तो घर में से किसी को इस काम में लगा दीजिए । अगर आपने रिक्शा, तांगे या किसी ऐसी ही सवारी का निजी इंतिज़ाम कर दिया है, तो भी उसपर हद से ज़्यादा भरोसा न कीजिए । अगर आप ख़ुद साथ न जा सकें तो कम से कम इसका इंतिज़ाम तो ज़रूर कर दीजिए कि मुहल्ले-गली की दो-चार लड़कियाँ एक ही साथ जाएँ और वापिस आएँ । अगर स्कूल की तरफ़ से बस सर्विस का इंतिज़ाम है तो उससे ज़रूर फ़ायदा उठाइए, चाहे उसके लिए आपको कुछ ज़्यादा ही क्यों न ख़र्च करना पड़े । अगर आपकी लड़की मजबूरन शहरी बस सर्विस इस्तेमाल करती है तो कोशिश कीजिए कि क़रीबी बस स्टॉप तक तो आप ज़रूर ही उसके साथ जाएँ और उसे बस में सवार होने में मदद दें । अगर उसी स्कूल तक मुहल्ले-गली की दूसरी कुछ लड़कियाँ भी जाती हैं तो उनमें से अख़लाक़ी लिहाज़ से बेहतर लड़कियों का साथ भी ग़नीमत है । वापसी का इंतिज़ाम भी ऐसा होना चाहिए कि छुट्टी की घंटी बजने के बाद आपकी लड़की को ज़्यादा देर स्कूल में न ठहरना पड़े ।

अपनी आँखें खुली रखें

ये तो वे बातें हैं जिनमें से कुछ का या अक्सरो बेशतर का बहुत-से माँ-बाप ख़ुद ख़्याल रखते हैं । लेकिन एक निहायत ही अहम बात को बहुत-से लोग आमतौर से नज़रअंदाज़ कर जाते हैं— और वह है "अपनी आँखें खुली रखना ।" आप हर मरहले पर अपनी आँखें ज़रूर खुली रखें । देखिए कि आपकी लड़की अपना सबक़ याद करती है या फ़िज़ूल चीज़ों में वक़्त गँवा देती है । किस चीज़ में उसे ग़ैर मामूली दिलचस्पी है ? कहीं उसकी दिलचस्पियाँ ग़लत रुख़ तो नहीं इख़तियार

कर रही हैं ? उसकी सहेलियों पर भी नज़र रखिए । यह काम बड़ा सब्र-आज़माँ है और इंतिहाई एहतियात भी चाहता है । आप भी अपनी बच्ची को यह एहसास न होने दें कि आप उसकी आज़ादी छीनना चाहती हैं । लेकिन साथ ही उसे यह एहसास ज़रूर रहे कि दो हमदर्दी भरी आँखे हर मौक़े पर उसके बेहतरीन हितों की निगरानी कर रही हैं ।

कुछ बातें वे हैं जिनका आपको ख़ास तौर पर ख़याल रखना है । पहली सबसे ज़्यादा ज़रूरी एहतियात यही है कि आप हर वक़्त अपनी आँखें खुली रखें । बिना बोझल बने अपनी निगरानी में कमी न होने दें । बेजा लाड-प्यार, हद से ज़्यादा आज़ादी, ज़रूरत से ज़्यादा भरोसा या ख़ुशफ़हमी, ये सारी चीज़ें लड़कियों को बिगाड़ने में बहुत अहम रोल अदा करती हैं ।

आपकी समझ-बूझ का इम्तिहान

"तुम लोगों को तो नेकी का उपदेश देते हो और अपने को भूल जाते हो ।" —क़ुरआन

"शौहर अपने घरवालों की देख-भाल करनेवाला है और औरत अपने शौहर के घर और उसके बच्चों की । तुममें से हरेक से उन लोगों के बारे में पूछ-ताछ होगी जो उसकी निगरानी में दिए गए हैं ।" —हदीस

अगर आपने अपनी लड़की की मुनासिब अँदाज़ से तरबियत की है और कोई ग़ैर मामूली हादसा पेश नहीं आता तो वह आसानी के साथ चौदह-पंद्रह या ज़्यादा से ज़्यादा सोलह साल की उम्र तक हाई स्कूल कर लेगी । जिस्मानी और ज़िहनी सेहत, घरेलू हालात और स्कूल का माहौल उसके विकास के लिए सबसे अच्छे साधन हैं ।

लड़की अब उस उम्र को पहुँच गई है जब वह ख़ुद भी अपने अन्दर होनेवाली तबदीलियों को किसी हद तक समझने लगती है । अब आपके फ़ैसला करने की ताक़त और समझ-बूझ के इम्तिहान का वक़्त है । आप उसकी आनेवाली ज़िन्दगी के बारे में क्या पसन्द करते हैं और उसके लिए क्या रास्ता चुनते हैं ?

विभिन्न रास्ते

आमतौर पर हमारे निकट निम्नलिखित में से कोई एक रास्ता होता है :—

1. माली हैसियत अच्छी नहीं है, इसलिए आप उसे और पढ़ा नहीं सकते मगर.....

2. आप अपनी लड़की से उम्मीद रखते हैं कि वह कमाने लगे और घर के ख़र्च में कुछ राहत मिल जाए ।

3. आप उसे और आगे पढ़ाना तो पसन्द नहीं कर सकते (कारण कई हो सकते हैं) लेकिन कॉलेज में दाख़िला दिलवा देते हैं ताकि बी०ए० तो कर ही ले । आख़िर घर बैठकर करेगी भी क्या ?

4. शादी की मार्किट में दाम कम लगने के डर से आप अपनी लड़की को पोस्ट ग्रेजुएट या कम से कम ग्रेजुएट देखना चाहते हैं ।

5. लड़की ज़हीन है इसलिए आप उसे आगे पढ़ाना चाहते हैं; आगे क्या होगा ? कुछ भी सही, अभी तो उसे पढ़ने दिया जाए ।

6. लड़की सेहतमंद है और दो-एक साल में शादी के लायक़ हो जाएगी। आप उसकी शादी पहले करना चाहेंगे लेकिन दहेज का मसला है। पढ़-लिख ले तो कमाने लगेगी और कमानेवाली लड़कियों की शादी जल्द हो जाती है।

7. आप उसकी जल्द से जल्द शादी करने के इच्छुक हैं लेकिन सवाल है रख-रखाव और 'नाक' (प्रतिष्ठा) का। कम से कम डिप्टी कलेक्टर या कोई आला ओहदेदार तो हो। भला वह क्यों हाई स्कूल लड़की पंसन्द करने लगा। इसलिए कम से कम ग्रेजुएट तो हो ही जाने दो।

8. अरे भई ! अभी बच्ची की उम्र ही क्या है। छोटी-सी तो है, उसे पढ़ लेने दो। शादी तो हो ही जाएगी।

9. लड़की मामूली शक्लो सूरत की है और दहेज भी बढ़-चढ़कर देने की शक्ति नहीं इसलिए लिखा-पढ़ा दो, शायद इसी वजह से अच्छा वर मिल जाए।

10. लड़की पढ़ी-लिखी होगी तो शौहर से दबकर नहीं रहेगी।

11. शादी के बाद ख़ुदा न करे कोई हादसा पेश आ गया तो अपाहिज होकर माँ-बाप और भाइयों पर बोझ तो नहीं बनेगी, ख़ुद खा-कमा लेगी।

12. लड़की का आग्रह है कि वह तो पढ़ेगी चाहे कुछ भी हो।

ये कुछ मुतबादिल सम्भावनाएँ हैं। उनके अलावा भी कई और बातें मुमकिन हैं। ज़रा फ़ैसला तो कीजिए कि उनमें से कौन-सी बात बेहतर है आपके लिए व्यक्ति की हैसियत से, एक मुसलमान होने की हैसियत से, और ख़ुद लड़की के लिए।

नौकरी

'ख़ुद कमाने लगे' यह बात मुस्लिम घरानों में अब भी (चाहे वह कितने ही रौशन ख़याल क्यों न हों) ज़रा कम ही सोची जाती है। और लड़की की कमाई खाने की बात (सिवाए इसके कि इसके अलावा कोई और सूरत मुमकिन न हो) अब भी ख़राब ही समझी जाती है। हालात की मजबूरी से अलग हटकर मुसलमान बाप यह सोचते हुए शर्म महसूस करते हैं कि उनके होते हुए उनकी लड़की नौकरी करे।

नौकरी करनेवाली लड़कियाँ

ग़ैर मुस्लिम ख़ानदानों में, ख़ासकर शहरी आबादियों में, सूरतेहाल कुछ भिन्न है। आमतौर पर वहाँ लड़कियाँ जल्द से जल्द कमाने की कोशिश करती हैं।

हो सकता है कि आप अपने पड़ोस में किसी ग़ैर मुस्लिम घराने की कमानेवाली लड़कियों और उनकी वजह से उस घर में सुख-साधनों की बहुतायत की वजह से कुछ देर के लिए चकित रह जाएँ, लेकिन ज़रा उसके दूसरे पहलू को भी सामने रखिए ।

मेरे एक ग़ैर मुस्लिम दोस्त ने रिश्ते की ज़रूरत का इश्तिहार दिया । चूँकि वह एक अच्छी सरकारी नौकरी पर थे इसलिए ख़्वाहिशमंदों की कमी नहीं थी । मसला चुनाव का आया तो उन्होंने बहुत-सी शक्लो सूरत की अच्छी, खाते-पीते घरानों की लड़कियों को छोड़कर एक ऐसी लड़की का चुनाव किया जो बी०एड० थी और स्कूल में उनसे कुछ ही कम तनख़्वाह पा रही थी । शादी के बाद कुछ दिनों तो वे बड़े ख़ुश रहे । कमानेवाली बीवी जो मिली थी, आमदनी दुगुनी हो गई थी, बड़ा आराम था । लेकिन बीवी शक्लो सूरत के लिहाज़ से मामूली थी और फिर उसपर सितम यह कि उसे अपनी 'क़ीमत' का एहसास था । दो-तीन सालों में ही वे गुम-सुम रहने लगे ।

धरती की जन्नत या जहन्नम

कमानेवाली लड़कियों की घरेलू ज़िन्दगी आमतौर पर बड़ी कड़वी होती है । अगर आप वाक़ई अपने को इतना मजबूर पाते हैं कि अपनी मासूम-सी लड़की को कमाने के लिए जहन्नम में झोंकने के लिए तैयार हैं तो ज़रा कुछ इन बातों का भी ध्यान रखिए :

यूँ तो किसी को भी 18 साल से कम उम्र में क़ानूनी तौर पर सरकारी या प्राइवेट नौकरी न मिल सकती है और न ही दी जा सकती है । लेकिन अगर आप ने कोशिश करके और ग़लत कह-सुनकर 18 साल उम्र बताकर नौकरी दिलवा भी दी तो आपने उसे ग़लाज़त के गढ्ढे में ढकेल दिया और वह भी जान-बूझकर ।

प्राइवेट नौकरी

अगर यह नौकरी किसी निजी आदमी या इदारे की है तो सबसे पहले मालिक 'अपना हक़' जताएगा । अगर मालिक ख़ुद शरीफ़ है या उसकी मंज़ूरे नज़र फ़िलहाल कोई दूसरी लड़की है तो दफ़्तर के साथी तरह-तरह से वरग़लाएँगे । अगर आपकी बच्ची आपके कहने के मुताबिक़ बहुत मासूम और भोली-भाली है तब भी उस माहौल में रहकर वह जल्द ही एक ऐसी 'धरती की जन्नत' से परिचित हो जाएगी जो उसके आनेवाले दिनों के लिए किसी तरह भी जहन्नम से कम नहीं ।

अगर वह ज़िद्दी है तो जल्द ही उसके काम में तरह-तरह के कीड़े निकाले

जाने लगेंगे और किसी बहाने उसे नौकरी से जवाब दे दिया जाएगा । चाहे वह अपने कामों में कितनी ही दक्ष क्यों न हो ।

ज़ल्दी या देर से वह मरहला ज़रूर आएगा जब उसे अपनी नौकरी और अपनी इज़्ज़त में से किसी एक का चुनाव करना पड़ेगा ।

इसमें शक्लो सूरत की भी कोई क़ैद नहीं है । ख़ूबसूरत लड़कियों को ज़रा जल्द ही और मामूली शक्लवालियों को कुछ दिन देर से वास्ता बहरहाल इसी सूरते हाल से पड़ता है । हो सकता है कि उसके कुछ साथी शरीफ़ हों लेकिन आमतौर पर ऐसे ही लोगों से उसे वास्ता पड़ेगा जो अपना हक़ माँगेंगे, कभी सब्ज़ बाग़ दिखाकर और कभी डरा-धमकाकर ।

इश्तिहारों के कॉलम

अगर आप किसी दैनिक अख़बार के इश्तिहार के कॉलम कुछ दिन पाबँदी से देखते रहे तो जल्दी ही यह हक़ीक़त सामने आ जाएगी कि कुछ इश्तिहारी धंधे ऐसे हैं जिन्हें हर दूसरे-तीसरे महीने नई लड़कियों की तलाश होती है । कभी-कभी यह काम अलग-अलग नामों से किया जाता है और कभी पोस्ट का नाम बदलकर ।

दिल्ली के मशहूर तरीन अस्पतालों में से एक के एक डॉक्टर को कुछ दिनों पहले इसी लिए सज़ा भुगतनी पड़ी कि उसने एक मुलाज़िम लड़की को अपनी मुसीबत से छुटकारा पाने में मदद दी थी । लड़की को छुटकारा क्या मिलता, जान से हाथ धोने पड़े और यह उस सूरत में जबकि मुल्क के कोने-कोने में फ़ैमिली प्लानिंग के नाम से अख़लाक़ और इस्मत को ग़ारत करनेवाली सहूलतें उपलब्ध हैं और गर्भपात के जाइज़ होने का क़ानून हमारी पार्लियामेंट पास कर चुकी है ।

मैं यह तो नहीं कहता कि नौकरी करनेवाली हर लड़की को लाज़मी तौर पर आबरू बाख़्ता (नैतिकता से गिरी हुई) समझा जाए, लेकिन इसमें शुबहा बहरहाल मुश्किल से ही किसी को होगा कि निजी इदारों में काम करनेवाली लड़कियों और शादीशुदा औरतों में से कम ही अपने को ग़ैरों के शोषण से महफ़ूज़ रख पाती हैं ।

तालीमी इदारों में नौकरी

आप कह सकते हैं कि प्राइवेट नौकरी न सही स्कूलों में शिक्षिका बनने में क्या हर्ज है ? हमारे यहाँ आमतौर पर दो तरह के स्कूल पाए जाते हैं— एक वह जिनका इन्तिज़ाम हुकूमत ख़ुद चलाती है और दूसरे वह जो निजी हाथों में हैं ।

जो स्कूल ग़ैर हुकूमती कन्ट्रोल में हैं उनमें बहाली का इख़्तियार "उसकी गवरनिंग बॉडी या किसी मर्द" के हाथ में होता है, कहीं-कहीं ऊँची क्लासों के लिए बहाली के वक़्त उस विषय का एक्सपर्ट भी चुनाव करनेवाली कमेटी में शामिल होता है । उनमें से कोई भी अपना 'हक़' तलब कर सकता है और उम्मीदवार के सामने दो ही रास्ते होते हैं या तो वे उनकी ख़्वाहिश पूरी कर दे या नौकरी से महरूम रह जाए ।

सरकार की निगरानी में चलनेवाले स्कूलों में बहाली डाइरेक्टर ऑफ़ एड्यूकेशन और ऐसे ही दूसरे ज़िम्मदारों के हाथ में होती है । एक डाइरेक्टर के सिलसिले में कम से कम यहाँ तो यह प्रथा सब ख़ास व आम की ज़बान पर थी कि उनसे नौकरी हासिल करने का बस एक ही ज़रिया था । अगर आप औरत हैं तो ख़ुद को पेश कर दीजिए और बदक़िस्मती से मर्द हैं तो अपनी किसी रिश्तेदार को न सही किराए की औरत उपलब्ध कराए, बस नौकरी पक्की । ऐसे कई आला अफ़सरों को हुकूमत ने वक़्त से पहले रिटायर होने पर उस वक़्त मजबूर किया जब उनके ख़िलाफ़ ऐसे पक्के सबूत पहुँचा दिए गए जिनका इनकार मुमकिन न था ।

नौकरी दिलवानेवाले इदारे

नौकरी के लिए उम्मीदवारों के नाम आमतौर पर अब एम्प्लाइमेंट एक्सचेंज से ही भेजे जाते हैं । इन इदारों में नामाँकन कराने और किसी जगह के लिए नाम निकलवाले में जो पापड़ बेलने पड़ते हैं वे कौन से कम हैं और उसपर उल्टे अगर कोई ऑफ़िसर या क्लर्क 'अड़' जाए ।

सरकारी नौकरियाँ

सरकारी नौकरियों में लड़कियों की तादाद में तेज़ी से इज़ाफ़ा हो रहा है ख़ास कर क्लर्कों, टाइपिस्टों और स्टेनों या पर्सनल सेक्रेट्री की जगहें तो उनके लिए ख़ास हो गईं हैं । आमतौर पर लोगों का सोचना यह है कि सरकारी नौकरियों में लड़कियाँ 'महफ़ूज़' होती हैं । मेरा तजुर्बा यह है और जिससे वे सारे लोग इत्तिफ़ाक़ करेंगे जो यह जानते हैं कि इसके अन्दर क्या होता है । यहाँ भी वह निजी शोबे के इदारों से कम ग़ैर महफ़ूज़ नहीं । ऑफ़ीसरों की फ़रमाँबरदारी कांफ़ीडेंशियल रिपोर्ट ख़राब होने का डर, साथियों की तरफ़ से शाम को सैर व तफ़रीह या किसी रेस्टोराँ में बैठकर एक कप कॉफी पी लेने की दावत, ग़रज़ हज़ारों बहाने हैं । क़दम-क़दम पर मजबूरियाँ या ख़ुशअख़लाक़ी का तक़ाज़ा ।

एक अख़बारी रिपोर्ट

दिल्ली में पुरातत्व विभाग की निगरानी में एक ऐतिहासिक महत्त्व के क़िले के बारे में कुछ दिनों पहले एक बड़ी सनसनीख़ेज अख़बारी रिपोर्ट छपी थी। कई अहम और चौंका देनेवाले इनकिशाफ़ात में से अहमतरीन यह था कि सरकारी दफ़्तरों के लंच टाइम में यहाँ आनेवाले जोड़ों का अनुपात कई गुना बढ़ जाता था। उनमें ख़ासी तादाद मोटर रखनेवाले आला सरकारी अफ़सरों और उनके साथ काम करनेवाली स्टेनों, पर्सनल असिस्टेंट, रिसेप्शनिस्ट या क्लर्क लड़कियों की होती थी।

दूसरे नम्बर पर क्लर्क और ऐसे ही दूसरे लोग थे जो अपने साथ काम करनेवालियों के साथ पहुँचते थे। बज़ाहिर उनका मक़सद यहाँ तनहाई में लंच लेना होता था लेकिन साथ ही ज़रा तफ़रीह भी हो जाती थी।

ऊँची तनख़्वाह का फ़रेब

अगर आप घर के अन्दर के भेद से ज़रा भी वाक़िफ़ हैं तो यह बात आपसे ढकी-छुपी नहीं होगी कि लड़कियों को टाइपिस्ट, रिसेप्शनिस्ट, सेल्स गर्ल, एयर होस्टेस, पी०ए० और ऐसी ही दूसरी मामूली जगहों के लिए बड़ी-बड़ी तनख़्वाहें पेश करनेवाले इदारे किसी इनसानी हमदर्दी और औरतों पर रहम करने के जज़्बे के तहत ऐसा नहीं करते। न ही वहाँ असल मेयार सिर्फ़ योग्यता को क़रार दिया जाता है अक्सर ऐसी सलाहियत रखनेवाली लड़कियाँ रद्द कर दी जाती हैं और कम सलाहियत की लड़कियों का चुनाव कर लिया जाता है, सिर्फ़ इसलिए कि वे शक्लो सूरत में अच्छी और अदाओं में निपुण हैं।

नौकरी मिलने के बाद

मान लीजिए कि आपकी मासूम-सी लड़की इन सारे मरहलों को भली प्रकार तय कर लेती हैं, और उसे अपनी इज़्ज़त की क़ुरबानी दिए बग़ैर नौकरी मिल जाती है। वह मुहतात भी है और वक़्त पर दफ़्तर पहुँचती हैं और छुट्टी मिलते ही सीधी घर चली आती है। इसके बावजूद ख़तरा अपनी जगह मौजूद है।

सरकारी नौकरी मिल जाने के बाद भी ख़ासा अरसा स्थायी होने में लगता है, अस्थायी दौर में उसका कोई ऑफ़ीसर भी, जिसे उसकी ख़ुफ़िया फ़ाइल पर रिमार्क देने का इख़तियार हासिल है, यह कहकर अपने जाल में फाँस सकता है कि वह ख़राब रिमार्क लिख देगा और फ़ाइल पर अगर यह लिखकर ऊपर भेज दिया गया

कि यह लड़की अपने काम के लिए योग्य नहीं है या सहयोग नहीं करती तो उसे नौकरी से निकाला जा सकता है । ऐसी बहुत-सी घटनाएँ लोगों के इल्म में हैं जहाँ लड़कियों ने नौकरी से बरतर्फ़ी के डर के मारे अफ़सरों को ख़ुश करना मंज़ूर कर लिया । यही हाल तरक़्क़ी पाने का है । यहाँ भी ख़ुशनूदी हासिल करने की भाग-दौड़ में ऐसे मरहले आ सकते हैं ।

दुकान की रौनक़

स्वागत करनेवाली लड़कियों (रिसेप्शनिस्ट) का तो बस काम ही यह है कि वह अपनी दिलफ़रेब अदाओं से आनेवालों का दिल ख़ुश कर सकें । यहाँ किसी और योग्यता की ज़रूरत नहीं । सिर्फ़ शक्ल अच्छी हो, हर वक़्त मुस्कुराना आता हो, अदाएँ दिलफ़रेब और ज़बान रवाँ हो । एयर होस्टेस का हाल इससे भी रद्दी है ।

"चलो दुकान की रौनक़ ही बढ़ेगी" यह एक ऐसा नारा है ज़िसकी वजह से बहुत-से मालिक नौकरियाँ देने में लड़कियों को तरजीह देते हैं । पश्चिमी देशों के अनुकरण में अक्सर दुकानदार (चाहे वह दुकान एक खोखा ही क्यों न हो) अगर सेल्समैन रखना चाहते हैं तो किसी लड़की को सेल्स गर्लबनाकर काउंटर पर खड़ा कर देते हैं ।

सरकारी सरपरस्ती में बहुत-से ऐसे इदारे हैं जहाँ स्टेनो, टाइपिस्ट, सेल्समैन, सेल्सगर्ल, सेक्रेट्री वग़ैरह के एक या दो साला डिप्लोमा कोर्स पढ़ाए जाते हैं । यूँ तो उनमें ज़्यादातर लड़कियाँ ही दाख़िला लेती हैं लेकिन तिहाई से ज़्यादा लड़के भी फंस जाते हैं । यहाँ से डिप्लोमा कर लेने के बाद लड़कों का हाल पतला होता है । लड़कियाँ फ़ेल होकर भी काम से लग जाती हैं और लड़के अच्छी पोज़ीशन हासिल करके भी सड़कें नापते हैं ।

नर्सिंग

नर्सिंग की तरबियत लेनेवालियों का हाल भी कुछ मुख़्तलिफ़ नहीं । हर साल ही नर्सिंग की तरबियत देनेवाले इदारों में ऐसे स्कैंडल मंज़रे आम पर आते रहते हैं जिनमें तरबियत पानेवाली नर्सों से बाक़ायदा पेशावर तवाइफ़ों जैसा काम लिया जाता है । कम से कम तरबियत देनेवाले अफ़सरों और डाक्टरों को ख़ुश किए बग़ैर तो ट्रेनिंग मुकम्मल होनी मुश्किल है ।

और भी कई ऐसे पेशे हैं जिनमें औरतों की ख़ासी माँग है, लेकिन यह ज़रूर ज़िहन में रखिए कि इन पेशों में आपकी लड़की अपने को किस क़द्र महफ़ूज़ रख सकेगी और शादी के बाद अपनी घरेलू शादीशुदा ज़िंदगी को अपने पेशे से कहाँ तक जोड़ सकेगी ?

जिस रिज़्क़ से आती हो.....

"खाओ हमारा दिया हुआ पाक रिज़्क़ और उसे खाकर सरकशी न करो ।"

—क़ुरआन

"रिज़्क़ के हासिल करने में जाइज़ ज़रिया और साधन काम में लाओ इसके हासिल करने में देर तुम्हें नाजाइज़ ज़रीआ इख़तियार करने पर राज़ी न कर दे, इसलिए कि अल्लाह तआला के पास जो कुछ भी है वह सिर्फ़ उसकी फ़रमाँबरदारी से ही हासिल किया जा सकता है ।"

अगर आपके हालात आपको मजबूर करते हैं कि आपकी लड़की अपनी योग्यताओं से आपके ख़र्चों में हिस्सा बटाए तो उसे घर में ही कोई ऐसा काम उपलब्ध करा दीजिए ज़हाँ वह अपनी मेहनत से कुछ कमा सके । यह काम जिस्मानी मेहनत के भी हो सकते हैं और दिमाग़ी सलाहियत के भी । आप अगर तलाश करें तो आसानी के साथ आपके शहर में बहुत-से ऐसे काम मिल सकते हैं जो घर में रहनेवाली लड़कियाँ और औरतें भी कर सकती हैं । मैं यक़ीनन इसके ख़िलाफ़ हूँ कि लड़कियों और औरतों को दिन भर चारपाई तोड़ने या गप्पें मारने के लिए आज़ादी दे दी जाए ।

दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता और ऐसे ही दूसरे औद्योगिक शहरों में तो इसके बहुत-से अवसर हैं । छोटे शहरों में भी ज़रदोज़ी, सिलाई, कढ़ाई, मोज़े, बनयाइन और स्वेटर बुनने, रंगने, बीड़ी बनाने और किताबत करने के काम आसानी से मिल जाते हैं ।

आप अपने आस-पास नज़र डालें । अगर आप ऐसे काम तलाश करना चाहें, जो औरतें घरों में रहकर या किसी क़रीबी औरतों के सेंटर में जाकर कर सकती हों तो आपको मायूसी न होगी । शर्त यह है कि आप अपने ज़िहन से इज़्ज़त का ग़लत तसव्वुर निकाल दें । कमाना है तो इज़्ज़त के साथ हलाल रोटी कमाइए ।

मेरे मुहल्ले की एक औरत सिलाई का काम करती है । कई साल पहले उनके शौहर का इंतिक़ाल हुआ तो घर में छोटी-छोटी लड़कियों के साथ तनहा रह गई । लड़का कोई नहीं था । उन्होंने किसी के आगे हाथ फैलाने के बजाए अपने हुनर पर भरोसा किया । सिलाई कुछ जानती थीं, हाथ साफ़ था, मेहनत से काम करती थीं और ग्राहक की मरज़ी के मुताबिक़ । लड़कियाँ तालीम हासिल करती रहीं और माँ का भी हाथ बँटाती रहीं । आज उनकी लड़कियों में से एक एम०ए० कर चुकी है दूसरी बी०ए० और बाक़ी दोनों भी बी०ए० के पहले और तीसरे साल में हैं ।

लड़कियों में अपनी सारी आला तालीम के बावजूद काम में ऐसी ही लगन है । पढ़ने-लिखने से यह फ़ायदा भी उन्हें पहुँचा कि अब वे नए-नए डिज़ाइनों के कपड़े सी सकती हैं । ख़ुदा का शुक्र है परदे और रोज़ा नमाज़ की पाबन्दी करती हैं और अल्लाह तआला पाँचों को बड़ी कुशादगी से रिज़्क़ दे रहा है । मैंने अपनी बीवी का बुर्क़ा उनसे सिलवाया और ख़ुशी के साथ उनको मुँह माँगे सिलाई के दाम दिए । हालाँकि यह बाज़ार रेट से कुछ ज़्यादा ही था । सिर्फ़ इसलिए कि बुर्क़े की तराश-ख़राश और सिलाई इतनी नफ़ीस थी कि जिसने देखा पसन्द किया । उसके बाद जब कभी कपड़े सिलवाने के लिए सोचा तो उन्हीं के दरवाज़े पर गया ।

लड़की पढ़-लिखकर अगर अच्छा ज़ौक़ रखती है तो उसे पढ़ने लिखने का काम भी मिल सकता है, तर्जुमे करने और मुख़्तलिफ़ विषयों पर मुख़्तलिफ़ भाषाओं में लिखने का काम भी कुछ शहरों में ख़ासा मिल जाता है ।

अगर आपके पास थोड़ा-सा धन है तो उससे कोई घरेलू उद्योग शुरू कर दीजिए । अगर आप मेहनत से काम करें तो कुछ ही दिनों में लड़कियाँ भी काम करने लगेंगी ।

आप लड़की को नौकरी न कराएँ और अगर इस कम उम्री में उसपर यह बोझ डालना ही पड़े तो ऐसी जगह तलाश करें जहाँ उसे अपनी इज़्ज़त का सौदा करने पर मजबूर न होना पड़े । हो सकता है कि आपके आस-पास ही कोई ऐसा तालीमी इदारा हो जहाँ आपकी बेटी को बहुत ज़्यादा तनख़्वाह तो न मिल सके लेकिन वह महफ़ूज़ रहकर नौकरी कर सकती हैं ।

इस सिलसिले में और विस्तार से निर्णय करना, मैं आप ही के फ़ैसले पर छोड़ता हूँ । हालात की मुनासिबत के एतबार से आप ख़ुद बेहतर फ़ैसला कर सकते हैं ।

पहले फ़ैसला कीजिए

"किसी मोमिन मर्द और मोमिन औरत को हक़ नहीं कि जब ख़ुदा और उसका रसूल कोई हुक्म दे तो वह उस काम में अपना भी कुछ इख़्तियार समझे ।"
—क़ुरआन

अब आप ज़रा दूसरी मुतबादिल तज्वीज़ों पर नज़र डालिए । आप अपनी लड़की को पढ़ाना नहीं चाहते लेकिन कॉलेज भेज देते हैं, सिर्फ़ इसलिए कि घर बैठकर करेगी भी क्या ?

क़ुव्वते फ़ैसला की कमी

अगर आपका ज़िहन इस रुख़ पर सोचता है तो यह बिलकुल स्पष्ट है कि आप ख़ुद कोई फ़ैसला नहीं कर पाते, क्या आपने कभी सोचा है कि लड़की को और अधिक तालीम दिलवाने का मक़सद आपके सामने क्या है ? क्या आला तालीम अपने आप में कोई मक़सद है ?

आप शादी की मार्केट में अपनी लड़की के दाम ऊँचे करना चाहते हैं ? क्या आला तालीम दिलवाने का मक़सद महज़ कुछ दिन या उस वक़्त तक लड़की को व्यस्त रखना है जब तक आप उसकी शादी के फ़र्ज़ को अदा नहीं कर देते ? क्या आला तालीम दिलवाकर आप उससे नौकरी कराना चाहते हैं ? या इस तरह से उसका भविष्य सुरक्षित करने की कोशिश कर रहे हैं ?

ज़रा ठहरिए और पहले फ़ैसला कीजिए कि इनमें से किस मक़सद की प्राप्ति आपके पेशेनज़र है ।

शादी की मार्केट

यह बात यक़ीनन सही है कि शादी की मार्केट में पढ़ी-लिखी लड़की के दाम आज-कल जाहिल या कम पढ़ी-लिखी लड़कियों से ऊँचे हैं । आजकल तो जाहिल और अनपढ़ लड़कियों से शादी करना कोई पसन्द ही नहीं करता । मेरे साथ अंग्रेज़ी भाषा और साहित्य की एम०ए० की डिग्री हासिल करनेवाली लड़कियों में से कम से कम दो ऐसी थीं जो शादी की मार्केट में सिर्फ़ अपने दाम लगवाने के लिए पढ़ रही थीं । कितनी दिलचस्पी रही होगी उन्हें अपनी पढ़ाई से इसका अंदाज़ा आप ख़ुद कर लीजिए । उनमें से एक बहुत मालदार घराने की बेटी थी और एम०ए०

करते ही उसकी शादी हो गई । शायद रिज़ल्ट का भी इंतिज़ार नहीं करना पड़ा । उसे एम०ए० की डिग्री मिल तो ज़रूर गई मगर सिर्फ़ पास करने भर, ख़ासी रिआयत के बाद भी सिर्फ़ इतने नम्बर मिल सके थे जो पास हो जाने के लिए ज़रूरी थे । दूसरी की शादी भी इम्तिहान ख़त्म होने के 15 दिन के अन्दर हो गई । उन लड़कियों ने अपनी समाजी ज़िन्दगी में इस तालीम या डिग्री से क्या फ़ायदा उठाया होगा, ये वही जानती हैं ।

चुनाव का दायरा

जहाँ एक पढ़ी-लिखी लड़की की क़ीमत शादी के बाज़ार में बढ़ सकती है, वहीं उसे दो तरफ़ा नुक़सान भी पहुँच सकता है । एक तो यह कि उसके लिए वर के चुनाव का दायरा बहुत सिकुड़ जाता है और दूसरे उम्र ज़्यादा हो जाने की वजह से उससे कम उम्र की लड़कियाँ मुक़ाबले में मैदान मार जाती हैं ।

अगर उम्र के छठे साल से किसी लड़की ने अपनी तालीम की शुरूआत की हो और एम०ए० तक 16 साल का शिक्षण काल बिना किसी साल फ़ेल हुए मुकम्मल कर लिया हो तो भी वह तालीम ख़त्म करते-करते 22 बरस की हो चुकती है । आमतौर पर लड़कियों की उम्रें कम बताई जाती हैं और अच्छी ख़ासी अधेड़ उम्र की औरतें भी अपने को 22, 23 साल का बताते नहीं शरमातीं । कभी-कभी यह चीज़ ख़ासी हास्यास्पद रूप इख़तियार कर लेती है, मसलन एक बार एम०ए० पास लड़की ने अपनी उम्र सिर्फ़ 16 साल लिखवाने पर आग्रह किया । अगर दरमियान में एकाध साल बीमारी, किसी इत्तिफ़ाक़ी हादसे या किसी और वजह से बरबाद हो गया तो लड़की की उम्र 24, 25 साल हो सकती है । बी०ए० करने की सूरत में भी यह 20 साल से कम नहीं होती । हिन्दुस्तान की गर्म आबो हवा में जहाँ लड़की 13, 14 साल की उम्र तक बालिग़ हो जाती है यक़ीनन 25 बरस तक उसे घर बिठाए रखना, चाहे तालीम के बहाने ही सही, उसपर एक ज़ुल्म है ।

छोटी-सी बात

ग्रेजुएट या एम०ए० लड़की के दाम शादी की मार्केट में तो ज़रूर बढ़ जाते हैं, लेकिन उसके लिए वर के इंतिख़ाब का दायरा यक़ीनन बहुत-सीमित हो जाता है । अगर लड़की एम०ए० या बी०ए० हो तो आप भी यही चाहेंगे कि उसका होनेवाला शौहर कम से कम एम०ए० तो ज़रूर ही हो और साहिबे हैसियत न सही किसी अच्छी जगह पर मुलाज़िम भी हो । लड़की को अगर यह एहसास

हो जाए कि उसका शौहर उससे तालीम, माल व दौलत यहाँ तक कि वंश और प्रतिष्ठा में कमतर है तो घरेलू ज़िंदगी की ख़ुशियाँ ख़तरे में पड़ जाती हैं । किसी वक़्त छोटी-सी बात मुँह से निकल गई और शौहर ने उसे ताना समझ लिया तो बस भुस में चिंगारी पड़ गई ।

बेजोड़ रिश्ते

अक्सर ख़ानदानी ताल्लुक़ात, रिश्तेदारी या कुछ दूसरी मसलहतों के पेशे-नज़र ऐसे बेजोड़ रिश्ते भी मंज़ूर करने पड़ते हैं, जहाँ लड़की तो ख़ासी पढ़ी-लिखी होती है और शौहर सिर्फ़ हाई स्कूल या इंटर, जिन्दगी कैसे निभेगी ? लड़की की तालीम किस काम आएगी ? इसका अंदाज़ा आप ख़ुद लगा लीजिए ।

मैं एक ऐसे साहब से वाक़िफ़ हूँ जो एक दफ़्तर में मामूली क्लर्क हैं और उनकी बीवी एक हायर सेकेण्डरी स्कूल की प्रिंसिपल । एक और साहिबा एक प्राइमरी स्कूल की हेड मिस्ट्रेस हैं लेकिन हालात ने उन्हें एक अनपढ़ चपरासी के पल्ले बांध दिया है । आप यह सुनकर शायद उस चपरासी की क़िस्मत पर रश्क करने लगें कि वह अपनी बीवी की कमाई से ख़रीदे हुए स्कूटर पर रोज़ सुबह पहले उन्हें उनके स्कूल पहुँचाने जाता है और फिर अपने दफ़्तर । लेकिन बीवी बेचारी के दिल पर क्या गुज़रती होगी यह वही जानती है । मुँह से तो बस इतना ही निकलता है कि क़िस्मत ने जिसके पल्लू में बांध दिया उससे पीछा कैसे छुड़ाया जाए ।

गले की ज़ंजीर

आला तालीम दिलवाने के बाद ज़रूरी नहीं कि शादी की मार्केट में सही वक़्त पर मुनासिब क़ीमत लग ही जाए । ऐसी बहुत-सी मिसालें मिल जाएँगी जहाँ ज़्यादा तालीम पाई हुई बहन की शादी का इंतिज़ाम भाइयों के लिए मुसीबत बन गया और उससे कम पढ़ी-लिखी लड़की पहले ही ब्याह दी गई । शक्लो सूरत, सीरत और कुछ हद तक दहेज— ये सारे मसले अपना-अपना काम करते हैं, बल्कि अंतिम चीज़ यानी दहेज तो शायद तालीम से भी बढ़कर है । मुल्क के कुछ हिस्सों में तो आपको ऐसी सैकड़ों लड़कियाँ मिल जाएँगी जो बहुत आला तालीम पाई हुई हैं और उसके बावजूद उनके लिए शौहर नहीं मिल पाते ।

घरेलू ज़िन्दगी की हक़ीक़तें

मान लीजिए आपकी लड़की ने आला तालीम मुकम्मल कर ली और फिर आपने

उसके लिए एक मुनासिब वर भी ढूँढ लिया, तो क्या ज़रूरी है कि उसकी घरेलू ज़िन्दगी ख़ुशगवार गुज़र जाए । मेरी एक क्लासफ़ेलो, जिसे एम०ए० में दूसरी पोज़ीशन मिली थी, बहुत ख़ूबसूरत भी थी, और घराना भी अच्छा खाता-पीता था । उसकी शादी अपने ही किसी क़रीबी रिश्तेदार से हुई जो अमेरिका से आला तालीम हासिल करके आया था । शादी होने के कुछ दिनों बाद यह राज़ खुला कि साहबज़ादे अमेरिका में भी एक अदद बीवी के शौहर बनने का सौभाग्य प्राप्त कर चुके हैं । 5-6 महीने के अन्दर ही अन्दर उनकी अमेरिकी बीवी तशरीफ़ ले आईं और चंद ही दिनों में शौहर समेत अमेरिका वापिस ।

अब बेचारी हिन्दुस्तानी बीवी क्या करे । तालीमयाफ़्ता, ख़ूबसूरत और मालदार भी, लेकिन घरेलू ज़िन्दगी जहन्नम का नमूना ।

मेरे परिचित लोगों के दायरे में एक डाक्टर साहब भी हैं, उन्होंने शादी के लिए मुल्क का एक-एक कोना छान मारा । आख़िर बड़ी धूम से शादी हुई । लड़की किसी आला अफ़सर की थी । दहेज भी बहुत ज़्यादा लाई । एम०एस०सी० कर चुकी थी या कर रही थी । डॉक्टर साहब ख़ासा कमाते थे, मगर ख़र्च पूरा नहीं होता था । बच्चे के लिए अलग नौकरानी, घर के काम-काज के लिए अलग नौकर, बीवी को नाविल पढ़ने और चारपाई तोड़ने से फ़ुरसत नहीं ।

तालीम बराए तालीम

यह वे सूरतें थीं जहाँ ख़ुशक़िस्मती से आप अपनी तालीम पाई हुई लड़की के लिए मुनासिब रिश्ता तलाश करने में कामयाब हो गए थे । ऐसी बहुत-सी घटनाएँ मेरी जानकारी में हैं और बहुत-सी आप भी जानते होंगे, जहाँ ख़ासी क़बूल सूरत और आला तालीम पाई हुई लड़कियों की शादी न हो सकी और अगर हुई तो ख़ासी उम्र में और बड़ी दौड़ भाग के बाद । कभी वंश और प्रतिष्ठा का चक्कर आड़े आया तो कभी दहेज का ।

कई साल पहले दिल्ली में एक अच्छे ओहदे पर विराजमान अफ़सर ने एक अंग्रेज़ी अख़बार में एक लम्बा पत्र भेजा था जिसमें उसने बड़े दुख के साथ इस बात की शिकायत की थी कि उसकी इंतिहाई तालीमयाफ़ता, मुल्कगीर शोहरत की मालिक लड़की के लिए मुनासिब वर सिर्फ़ इस वजह से नहीं मिलता कि उसकी बिरादरी में उसके मेयार और विचार के लड़के नहीं हैं और ग़ैर बिरादरी में शादी की सारी कोशिशें अब तक नाकाम रही हैं । वह अपनी हैसियत से बढ़कर दहेज देने को भी तैयार थे । मगर बिरादरी से बाहर उनका तलबगार न था ।

दूसरी मुतबादिल सूरतों पर भी यह सारी बातें अक्षरशः सत्य साबित होती हैं। लड़की लाख ज़हीन सही लेकिन तालीम बराए तालीम न तो उसके मसलों का हल है और न उसके भविष्य की ज़मानत। तालीम के बाद आगे क्या होगा ? अगर आपके ज़िहन में स्पष्ट नहीं तो लड़की ख़ुद क्या फ़ैसला करेगी ?

कॉलेज के अहाते में

"ऐ नबी (सल्ल०) ! आप मोमिन औरतों से कह दें कि वे अपनी नज़रें बचाकर रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें और अपना बनाव-सिंगार न दिखाएँ, सिवाय इसके जो ख़ुद ज़ाहिर हो जाए । और अपने सीनों पर अपनी ओढ़नियों के आँचल डाले रहें ।" —क़ुरआन

बढ़ते क़दम

तालीम बड़ी तेज़ी से आम हो रही है । मुल्क के हर कोने में यूनिवर्सिटियों और कॉलेजों का जाल बिछता जा रहा है । तालीमगाहों के दरवाज़े लड़कों ही के लिए नहीं लड़कियों के लिए भी खुले हुए हैं । ऐसी कोई युक्ति नहीं जिसके अनुसार इल्म का हासिल करना मर्दों के लिए तो जाइज़ और कामयाबी का साधन हो लेकिन औरतों के लिए नुक़सानदेह ।

लड़कियों की आला तालीम के लिए सहशिक्षा कॉलेज भी मौजूद हैं और ऐसे भी जहाँ सिर्फ़ लड़कियाँ पढ़ती हैं और उस्तानियाँ ही पढ़ाती हैं । अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी में काफ़ी समय से बी०ए०, बी०एस०सी० तक लड़कियों के लिए न सिर्फ़ अलग होस्टलों का इंतिज़ाम है, बल्कि अलग क्लासों का भी । सिर्फ़ एम०ए०, एम०एस०सी० में या दूसरे आला दरजों में ही लड़कियाँ लड़कों के साथ पढ़ने आती हैं ।

चोर दरवाज़े

यह तो था वह रौशन पहलू जिससे इनकार किसी को नहीं । अब तक जो कुछ मैंने कहा उससे आप हरगिज़ यह नतीजा न निकाल लें कि मैं लड़कियों को आला तालीम दिलवाने के ख़िलाफ़ हूँ । मैं तो आपको सिर्फ़ चोर दरवाज़ों से ख़बरदार कर देना चाहता हूँ जिनसे ख़राबियाँ राह पा जाती हैं ।

सहशिक्षण कॉलेज

लड़कियों को आला तालीम दिलवाइए मगर ज़रा रुकिए । पहले यह तो फ़ैसला कर लीजिए कि आप यह आला तालीम किस लिए दिलवा रहे हैं ।

अगर आपने किसी सहशिक्षण पाठशाला में तालीम पाई है, ख़ुसूसन कॉलेज

या यूनिवर्सिटी में तो आपने अपने ही साथियों के मुँह से इंतिहाई अभद्र शब्द निश्चय ही सुने होंगे । लड़कियों पर आवाज़ें कसने में तो गोया कोई बुराई ही महसूस नहीं होती । यूनिवर्सिटी या कॉलेज कैफ़ेटेरिया या शिक्षण अवधी में 'तफ़रीहों' का केन्द्र होते हैं । सिनेमा, पार्क और दूसरी तफ़रीही जगहों पर प्रोग्राम के मुताबिक़ मुलाक़ात और वक़्त गुज़ारी रोज़मर्रा का मामूल बनते हैं और विडम्बना यह कि टीचर या तो आँखें बँद कर लेते हैं या ख़ुद ऐसी तफ़रीहों को बढ़ावा देते हैं । ऐसे उस्तादों की भी कमी नहीं जो (शराफ़त का कोई अंश उनके अन्दर बाक़ी रह गया है तो) अपनी शागिर्दों से ताल्लुक़ क़ायम करते और शादी कर लेते हैं, वरना बग़ैर शादी के ही जब तक चल सके काम चलता रहता है और वक़्त आने पर हाथ झाड़कर किनारे खड़े हो जाते हैं । आपने अगर उनकी उक्ति न सुनी हो तो अब सुन लीजिए । "भला ऐसी बेवकूफ़ लड़की से शादी करना सोचा जा सकता है ? अगर यह मेरे साथ इतनी हद तक आगे बढ़ सकती है तो दूसरों के साथ भी उससे आगे जा चुकी होगी । हुँह ! अगर यूँ ही मैं 'हर ऐसी' लड़की से शादी करता चलूँ तो फिर तो ज़िन्दगी बीत चुकी ।"

लड़कियों के कॉलेज

अगर आपने अपनी लड़की को किसी ऐसे कॉलेज में दाख़िला दिलवा दिया है जो सिर्फ़ लड़कियों के लिए हैं और वहाँ औरतें ही पढ़ाती हैं तो भी आप मुतमइन होकर न बैठ जाएँ, यहाँ ख़तरे अपेक्षाकृत कम ज़रूर हैं, लेकिन उनकी शक्ल बदली हुई होती है । यहाँ भी आपकी लड़की बिलकुल महफ़ूज़ नहीं । अपनी निगरानी में कमी करके आप यक़ीनन अपने पैरों पर अगर कुल्हाड़ी नहीं चलाएँगे तो लड़की का भविष्य ज़रूर ख़तरे में डाल देंगे ।

लड़कियों के कॉलेजों (और उनके साथ होस्टल भी हैं जहाँ आपकी लड़की दूसरी लड़कियों के साथ रहती है) में ऐसी लड़कियों की तादाद ज़्यादा होती है जो औसत घरानों से ताल्लुक़ रखती हैं । ग़रीब घरानों की लड़कियाँ कम ही वहाँ तक पहुँच पाती हैं और बहुत ऊँचे या मालदार घरानों की लड़कियों का औसत भी ज़्यादा नहीं होता ।

प्रतिस्पर्धा

मध्यम वर्ग की लड़कियों में आमतौर पर यह रुजहान पाया जाता है कि वे न सिर्फ़ अपनी सफ़ेदपोशी का भ्रम क़ायम रखने की कोशिश करती हैं बल्कि अमीर लड़कियों की बराबरी करने की कोशिश भी । प्रतिस्पर्धा पढ़ाई में हो तो बड़ा अच्छा

जज़्बा है, लेकिन आमतौर पर दौड़ कपड़ों के फ़ैशन, रहन-सहन के वैभव का स्तर और रोज़मर्रा के जेब ख़र्च में होती है । रोज़ाना नया जोड़ा होना चाहिए इसलिए कि अमुक-अमुक भी तो नित नए कपड़े पहनकर आती हैं । कपड़ों के साथ चप्पलों और कानों के आभूषणों का रंग भी मैच करना चाहिए । बाल किस फ़ैशन से बनाएँ जाएँ कि सब देखकर वाह-वाह कह उठें । सर्दियों में इन आवश्यकताओं की सूची में कुछ और इज़ाफ़ा हो जाता है ।

नामुनासिब ज़रूरतें

अगर घरवाले बेजा नाज़-नख़रे उठाने के आदी हैं तो वे अपनी लड़की की सारी ख़्वाहिशों को पूरी करने की कोशिश करेंगे । लेकिन ज़रूरी नहीं कि उनकी माली हैसियत इस फ़िज़ूल ख़र्ची को बरदाश्त कर सके । अगर माँ-बाप नित-नए डिज़ाइन के फ़ैशनेबल कपड़े बनवाकर नहीं दे सकते या जेब ख़र्च के लिए माँगी गई रक़म रोज़ाना उपलब्ध कराना उनके बस से बाहर है तो फिर इन 'ज़रूरतों' को पूरा करने के लिए लड़कियाँ दूसरे रास्ते तलाश करने की कोशिश करती हैं ।

एक खुला राज़

15 से 22, 23 साल तक उम्र का वह हिस्सा होता है जब लड़के ही नहीं लड़कियाँ भी इंतिहाई जज़्बाती होकर हर चीज़ को सोचती हैं । अपनी मरज़ी के ख़िलाफ़ ज़रा-सी बात बर्दाश्त करना उनको आता ही नहीं । अगर आपकी लड़की आपके कंट्रोल में नहीं है तो वह या तो आपके लिए ही दर्दे सर बन जाएगी या फिर अपने तौरपर नए ज़रिए तलाश कर लेगी ।

ज़रूरतों के नाम पर और अधिक रक़म की तलाश एक ऐसी भूलभुलैयाँ है जिसमें न सिर्फ़ ग़रीब घरानों की बेटियाँ या मध्यम वर्ग की लड़कियाँ चक्कर काटती नज़र आती हैं, बल्कि उनका बड़ा हिस्सा सम्मिलित होता है मालदार और अपटूडेट तरक़्क़ी याफ़्ता घरानों की लड़कियों पर । उन लड़कियों को उनके माँ-बाप उससे कहीं ज़्यादा रक़म उपलब्ध कराते हैं जिनकी उनको वाक़ई ज़रूरत होती है, लेकिन ज़रूरतों की सूची को लम्बी से लम्बी किया जाता रहा तो उनकी उपलब्धि के लिए शायद क़ारून का ख़ज़ाना भी काफ़ी न हो ।

ज़रूरतों की कोई इंतिहा नहीं । अगर उनको पूरा करने के लिए रक़म हासिल करने का गुण एक मरतबा किसी लड़की को सूझ जाए तो किसी हद पर पहुँचकर रुक जाना उसके लिए नामुमकिन है । पहले तो डर यह रहता था कि माँ न बन जाएँ, लेकिन तरक़्क़ी के इस दौर में जब फ़ैमिली प्लानिंग के साधन हर वक़्त और

हर जगह हासिल हैं तो यह डर भी जाता रहा । अगर सारी सावधानियाँ नाकाम रहीं तो मदद के लिए गर्भपात की वैधता का क़ानून हिन्दुस्तान में मंजूर हो ही चुका । बस किसी अस्पताल में जाकर फ़ॉर्म भरा और चंद घंटों बाद भली-चंगी घर । दो-चार दिन की सावधानी के बाद फिर वही चक्कर शुरू । न माँ-बाप को पता चला, न बदनामी हुई ।

इससे पहले मैंने ज़िक्र किया है ऐसी सहेलियों का जो उम्र और तजुर्बे में ज़्यादा होती हैं । स्कूल जाने की उम्र तक तो माँ-बाप का दबाव, कम उम्री का एहसास और किसी हद तक अंजाना ख़ौफ़ लड़की को हदें फाँदने से रोके रखता है । लेकिन कॉलेज की तो दुनिया ही अलग होती हैं, उम्र का तूफ़ानी दौर, आज़ादी और बग़ावत का भरपूर जज़्बा, माँ-बाप की तरफ़ से अपेक्षाकृत ज़्यादा ढील और ये सहेलियाँ, ये सारी चीज़ें मिलकर लड़की को उस गढ़े की तरफ़ धकेलने लगती हैं जिसमें गिरकर फिर मुश्किल से ही कोई बाहर निकल पाता है ।

तजुर्बेकार लड़कियाँ अपने अफ़साने सुनाती हैं । कॉलेज़ के लॉन से बाहर बस स्टॉप तक पहुँचते-पहुँचते हालत कुछ ऐसी बन जाती है कि कोई भी सुननेवाली दूसरी से पीछे रह जाने या दूसरे शब्दों में नक्कू बन जाने का ख़तरा मोल नहीं लेना चाहती ।

नया सबक़

यह सबक़ उसी दिन से पढ़ाया जाने लगता है जिस दिन आपकी लड़की कॉलेज में दाख़िला लेने के लिए उसके अहाते में क़दम रखती है । कुछ डरी-सहमी लेकिन दिल में नए जज़्बात लिए अभी वह गेट से अन्दर घुसती ही है कि सीनियर लड़कियों का झुण्ड का झुण्ड उसे घेर लेता है और फिर उसे कुरबानी के बकरे की तरह हर तरफ़ से टटोला जाता है । ऐसे सवालों की बौछार उस मासूम कुँवारी लड़की पर पड़ती है जिनको आज से दस, बारह बरस पहले शादीशुदा औरतों से भी पूछ लिया जाता तो वे शरमाकर चुप साध लेतीं । आपकी लड़की अजीब असमंजस में होती है, चुप रहे तो खिंचाई ज़बान खोले तो क़हक़हे और जानबख़्शी से पहले उसके गालों या पेशानी पर लिपस्टिक से लाल तिकोन का निशान, इस ताकीद के साथ कि अगर उसे मिटाने की हिम्मत की तो और ज़्यादा खिंचाई होगी । इस दौर में जब फ़ैमिली प्लानिंग शायद मुल्क के इंतिहाई दूर-दराज़ हिस्सों तक पहुँच चुकी है, इस लाल तिकोन का मतलब कौन नहीं जानता, लेकिन उस कुँवारी लड़की का ज़िहन किस तरह उससे दूषित किया जाता है इसका अंदाज़ा आप भी लगा सकते हैं।

इंट्रोडक्शन (परिचय)

दिल्ली के अख़बार हर साल जुलाई के मध्य में कॉलेजों और यूनिवर्सिटियों में दाख़िलों की ख़बरों से भरे होते हैं, चंद रोज़ तक पाबन्दी से यह कॉलम देख लीजिए । यहाँ लड़कियों के लगभग तमाम ही मशहूर और बड़े कॉलेजों में नया दाख़िला लेनेवालियों की जो दुर्गत बनती है उसकी बहुत-सी तफ़सीलें मुहज़्ज़ब अन्दाज़ में मिल जाएँगी ।

हर साल ही ऐसी अख़बारी रिपोर्टें प्रकाशित होती रहती हैं जिनमें उन कॉलेजों की लड़कियों की आम अख़लाक़ी हालतों की अक्कासी होती है । ज़्यादा दिन नहीं गुज़रे जब एक सर्वे के बड़े चौंका देनेवाले नतीजों का कुछ हिस्सा आम लोगों के सामने आया था । इस सर्वे के मुताबिक़ यहाँ के कॉलेजों और यूनिवर्सिटियों में पढ़नेवाली लड़कियों में शराब पीने का औसत 27% या कमो बेश था । उनकी ख़ासी तादाद सिगरेट नोशी और नशा या नशाआवर दवाओं के इस्तेमाल की आदी बन चुकी थीं

बेफ़िक्री की नींद

मक़सद हरज़िग यह नहीं कि कॉलेज में पढ़नेवाली सभी लड़कियों के किरदार को मशकूक बना दिया जाए । आपको सिर्फ़ चौकन्ना रहने की ज़रूरत है । अपनी लड़की को कॉलेज भेजकर बेफ़िक्री नींद न सो जाइए । वे सारी सावधानी बरतिए जिनकी तरफ़ मैं पहले इशारा कर चुका हूँ, लेकिन बड़ी सावधानी और मधुरता के साथ । अगर आपने ज़बरदस्ती या दबाव से काम लिया तो मसला सुलझने के बजाए संगीन होता जाएगा । इस उम्र में बग़ावत का जज़्बा बहुत अधिक होता है और बच्चे बहुत-से क़दम बेसमझे-बूझे उठाने में भी देर नहीं करते ।

माँ की ज़िम्मेदारी

माँ का फ़र्ज़ अब और ज़्यादा बढ़ जाता है । यह माँ ही है जो अपनी लड़की को सामने आनेवाले ख़तरों से आगाह कर सकती है । इस विषय पर चर्चा करते बाप को यूँ भी हिचकिचाहट होती है और लड़की की ग़ैरत को ठेस लग सकती है । आप उसे सतित्व और पवित्रता की क़द्र व क़ीमत से ही नहीं, इस्लाम की आला तालीमों से भी बख़ूबी वाक़िफ़ कराने की कोशिश करें । आप उसपर अच्छी तरह स्पष्ट कर दीजिए कि उसे इस सिलसिले में किसी तरफ़ से भी होनेवाली पहल को फ़ौरन धुतकार देना चाहिए ।

वक़्त तेज़ी से बदल रहा है, मौजूदा हालात में ख़ुद आपका इम्तिहान है । आपके ईमान का इम्तिहान और आपकी आनेवाली या मौजूदा नस्लों का इम्तिहान । अगर आप ईमान की इच्छित मज़बूती पैदा नहीं कर सके तो अल्लाह तआला आपसे आपके बारे में पूछताछ करेगा और आपकी औलाद के लिए जवाबदही भी पहले आप ही को करनी होगी।

पसन्द की शादी

"तुम मुशरिक औरतों से हरगिज़ निकाह न करना, जब तक कि वे ईमान न ले आएँ, एक मोमिन लौंडी मुशरिक शरीफ़ज़ादी से बेहतर है, अगरचे वह तुम्हें बेहद पसन्द हो। और अपनी औरतों के निकाह मुशरिक मर्दों से कभी न करना जब तक कि वे ईमान न ले आएँ। एक मोमिन ग़ुलाम मुशरिक शरीफ़ से बेहतर है अगरचे वह तुम्हें पसन्द हो। ये लोग तुम्हें आग की तरफ़ बुलाते हैं।" —क़ुरआन

"किसी मोमिन मर्द और किसी मोमिन औरत को यह हक़ नहीं कि जब अल्लाह और उसका रसूल (सल्ल०) किसी मामले का फ़ैसला कर दे तो फिर उसे अपने मामले में ख़ुद फ़ैसला करने का इख़तियार हासिल रहे।"

—क़ुरआन

आजकल कुछ फ़ैशन-सा बन गया है कि अच्छे-ख़ासे खाते-पीते मुसलमान घरानों की लड़कियाँ ग़ैर मुस्लिमों से शादी कर लेती हैं। इससे अलग हटकर कि यह मिली-जुली शादियाँ (चाहे उसमें लड़का दूसरे मज़हब का हो या लड़की ग़ैर मुस्लिम होते हुए किसी मुसलमान से शादी कर ले) किस हद तक कामयाब रहती हैं और पहली नज़र की मुहब्बत का ख़ुमार उतरने तक मुँह का मज़ा कितना कड़वा हो जाता है, इस्लाम के आदेश बिलकुल स्पष्ट हैं।

जज़्बात का तूफ़ान

वक़्ती तौरपर जज़्बात के तूफ़ान में बहकर ऐसा एक़्दाम कर गुज़रनेवाले हो सकता है, अपने को मॉडर्न और सेक्यूलर कहलवाने का गर्व प्राप्त कर लें। लेकिन अपनी घरेलू ज़िन्दगी को वह जितना कड़वा बना लेते हैं उसका एहसास सालों में नहीं बल्कि कुछ ही महीनों में हो जाता है।

अगर आप ज़रा गहराई में जाकर उसके कारणों को तलाश करें तो लड़कियों की उस भयानक ग़लती के ज़िम्मेदार माँ-बाप ही नज़र आएँगे। उन्होंने न ख़ुद इस्लाम को समझा और न अपनी औलाद को इस्लाम की बुनियादी तालीमात से वाक़िफ़ कराया।

शादी के बाद ऐसे जोड़े दोनों समाजों से कटकर रह जाते हैं। अपने सारे तरक़्क़ी पसन्दी के दावों के बावजूद उनको न लड़के का समाज क़बूल करने पर तैयार

होता है और न लड़की का । शादी के बाद मज़हबी फ़राज़ (धार्मिक कर्त्तव्यों) की अंजामदही, समाज में अपना स्थान, बच्चों का मज़हब और उनका भविष्य उनकी तरबियत और ख़ुद अपना ज़िहनी सुकून ये सारे मसले बहुत गम्भीर बनकर सामने आते हैं ।

ख़ुशनसीबी या बेवक़ूफ़ी

अब चूँकि आगे बढ़ाया हुआ क़दम वापस नहीं लिया जा सकता इसलिए मज़बूरन दोनों के सामने अपनी ग़लती या अपने माँ-बाप की बेवक़ूफ़ी को निभाने के सिवा कोई चारा नहीं रहता । ये मुसलमान औरतें या मुसलमान मर्द, जो ग़ैरों में शादी करते वक़्त तो अपने को बड़ा खुशनसीब समझते हैं, जल्द ही अपने को एक ऐसी गली में पाते हैं जिसके सामने का रुख़ बंद है और वापस जाने के रास्ते भी बन्द । उनका ख़ानदान और उनका समाज उन्हें वापस लेने को तैयार नहीं और नए समाज में अपने को पूरे तौरपर फ़िट कर लेना उसी वक़्त मुमकिन है, जब अपनी अलग पहचान कम से कम मज़हब और तौर-तरीक़ों की हद तक बिलकुल खो दी जाए । कोई भी हस्सास व्यक्ति इस सूरते हाल को शायद ही बर्दाश्त कर सके । मैं यहाँ मिसालें देना पसन्द नहीं करता लेकिन ऐसी बहुत मिसालें हरेक के सामने मौजूद हैं ।

लालच

आमतौर पर इस गुनाह में फँसनेवाली प्रतिष्ठित घरानों की तालीमयाफ़ता और रौशन ख़याल साहबज़ादियाँ हैं । अकसर सूरतों में इसका नतीजा यही निकला है कि मुसलमान ख़ानदानों ने उन शादियों को समाजी तौर पर क़बूल करने से इनकार कर दिया । जिन घरानों ने ऐसी शादियों को सहन किया है उनके सामने या तो राजनीतिक फ़ायदे और आर्थिक मसलहतें थी या अपने को अल्ट्रा सेक्यूलर और अल्ट्रा मॉडर्न साबित करने की धुन । कुछ घरानों ने यह कहकर अपने दिल को तसल्ली देना चाही कि आख़िर इन ग़ैर मुस्लिम दामादों या बहुओं से ज़्यादा तालीम याफ़्ता और स्तरीय व्यक्ति उन्हें कहाँ मिलते । बाक़ी सारी मिसालों में उन लड़कियों का हमेशा के लिए अपने ख़ानदानों से रिश्ता टूट गया । यह भी बहरहाल यक़ीनी है कि मुस्लिम समाज से उनके सारे सम्बन्ध हमेशा के लिए ख़त्म हो गए और अगर कभी उन्होंने दोबारा उन रिश्तों को बनाने की कोशिश की तो नीची नज़रें किए और शरमिंदगी में डूबकर ।

कारक

लड़कियाँ घरों से बाहर निकलेंगी तो उन्हें तरह-तरह के लोगों का सामना करना पड़ेगा । तालीमी इदारों में और आते-जाते हर तरह के लड़के सामने आएँगे । शक्लो सूरत के अच्छे, बेहतरीन कपड़ों में सुसज्जित, खाते-पीते और अपने तौर-तरीक़ों से प्रभावित करनेवाले । अगर माँ-बाप ने अपने फ़र्ज़ में कोताही बरती है और अपनी लड़की को उन नतीजों से ख़बरदार नहीं कर दिया है, जो उसकी किसी भूल या वक़्ती फ़ैसले की ग़लती से पैदा हो सकते हैं, तो वह वक़्त आ सकता है जब उसका कोई फ़ैसला माँ-बाप के लिए परेशानी का सबब बन जाए ।

आपकी लड़की भोली-भाली है, लेकिन हो सकता है उसे कोई लड़का पसन्द आ जाए, आपकी बेहतर तरबियत की वजह से वह हो सकता है किसी भूलचूक से बच जाए, लेकिन अगर वह आग्रह करती है कि अपनी पसन्द ही के लड़के से शादी करेगी तो आप क्या कर लेंगे ? ज़रूरी नहीं कि उसकी यह पसन्द किसी मुसलमान लड़के के लिए ही हो । बहुत-सी हालतों में कोई ग़ैर मुस्लिम लड़का भी पसन्द आ सकता है । उसके कारक आम तौरपर ये होते हैं :—

1. स्तरीय मुसलमान लड़कों की कमी
2. व्यक्तिगत पसन्द या मुहब्बत
3. कोई वक़्ती भूल

आप अपनी लड़कियों के सामने क़ुरआन की वे आयतें बार-बार रखें जिनमें ऐसी विजातीय शादियों को मुसलमान मर्दों और मुसलमान औरतों दोनों के लिए हर हालत में हराम क़रार दिया गया है । उन्हें जज़्बात के धारे में बहकर फ़ैसला करने के नतीजे समझाते रहें और अपनी आँखें खुली रखें, तो उन्हें इस ग़लती में पड़ने से ख़ास हद तक बचा सकते हैं, लेकिन इन सबसे ज़्यादा अहम है उनकी वक़्त पर शादी का इंतिज़ाम ।

अच्छे रिश्ते

"अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया जब तुम्हारे पास किसी ऐसे शख़्स के निकाह का पैग़ाम पहुँचे जिसके दीन व अख़लाक़ को तुम पसन्द करते हो तो उससे शादी कर दो। अगर तुम ऐसा न करोगे तो दुनिया में बड़ा फ़ितना बरपा होगा।" —हदीस

लड़कियों के लिए अच्छे रिश्ते नहीं मिलते। यह एक ऐसी शिकायत है जो लगभग सभी घरों में आप सुन सकते हैं।

मेयार

"मेयार" एक ऐसा झूठा पैमाना है जिसने आम मुसलमान घरानों को आज़माइश में नहीं, फ़ितने में डाल दिया है। हमारे कितने ही समाजी मसले सिर्फ़ इसी एक मेयार की बदौलत समाधान से दूर होकर रह गए हैं। यह एक ऐसा मकड़ी का जाला है जिसमें मुस्लिम समाज पूरी तरह जकड़ा जा चुका है और जितना ही हाथ पैर हिलाता है उतना ही उसमें फँसता चला जाता है।

ज़रा सोचिए तो आप मेयार किसे कहते हैं ? आपका जवाब सीधा सादा-सा यह है कि 'कुफ़ू' (समानता)

कुफ़ू (समानता)

बहुत-से लोग कुफ़ू का अर्थ ग़लत समझते हैं और इस सिलसिले में इतनी शिद्दत बरतते हैं कि उनकी बहनों और लड़कियों की ज़िन्दगी अज़ाब बनकर रह जाती है।

"लोगो ! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हारी क़ौमें और क़बीले बनाए, ताकि एक-दूसरे की पहचान कर सको। ख़ुदा के नज़दीक तुममें ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो ज़्यादा परहेज़गार है।"

—कुरआन

19 अप्रैल 1972 ई० के "दावत" अख़बार में शायद आपने देखा हो कि इस बेजा शिद्दत का अंजाम कितना अफ़सोसनाक निकल रहा है।

भोपाल जैसे शहर की बात है जो ख़ासे समय तक मुस्लिम तहज़ीब और सभ्यता

का गहवारा रहा है । उसी शहर में 16 अप्रैल, 1973 ई० को मुहल्ला जहाँगीरबाद के गिरजाघर के सामने एक ताँगा आकर रुका जिसमें एक मुसलमान मर्द, उनकी बीवी, दो जवान लड़कियाँ और लड़के सवार थे । मुसलमानों में ज़ात-पात की लानत ने जिस तरह रिवाज पा लिया है उससे तंग आकर पूरे ख़ानदान ने फ़ैसला कर लिया था कि वे ईसाई हो जाएँगे, इत्तिफ़ाक़ से उसी वक़्त एक जाने-पहचाने आदमी वहाँ से गुज़रे, जब उन्होंने पूछा कहाँ का इरादा है तो पूरा मुसलमान ख़ानदान रो पड़ा । उन्होंने बताया कि अपने मुसलमान भाइयों, ख़ासकर पड़ोसियों, के सुलूक से तंग आकर उन्होंने यह फ़ैसला कर लिया है कि इस्लाम को छोड़कर ईसाई मज़हब इख़तियार कर लें ।

उनकी एक लड़की जवान हो चुकी थी और उसकी शादी के सिलसिले में वे सख़्त परेशान थे । बड़ी भाग-दौड़ के बाद जब कहीं से कोई पैग़ाम आता तो पड़ोसी मुसलमान यह कहकर पैग़ाम देनेवालों को भड़का देते कि लड़की का ख़ानदान तो नाई बिरादरी से ताल्लुक़ रखता है । हालाँकि वे अपनी शराफ़त और रहन-सहन में बहुत-से मध्यमवर्गीय मुसलमान शरीफ़ों के ख़ानदानों से बेहतर था और अब इस पेशे से उसका अर्से से कोई सम्बन्ध ही नहीं था ।

वह बड़ी मुश्किल से सबको मनाकर अपने घर ले गए और वहाँ उन्होंने अपनी बीवी से सारा माजरा कह सुनाया । उनकी बीवी भी ग़ैरतदार ख़ातून थीं, उन्होंने अहद किया कि वे दोनों लड़कियों की शादी का बंदोबस्त जल्दी से जल्दी करेंगी और कोई बेहतर रिश्ता न मिला तो ख़ुद अपने लड़के से निकाह करा देंगी ।

बिरादरी और ख़ानदान

नाई, धोबी, लोहार, सब्ज़ी बेचनेवाला, मोची, बढ़ई वग़ैरह ये सारी ज़ातें मुसलमानों में भी बन चुकी हैं और उनकी बिनापर, ऊँच-नीच शादी-ब्याह से परहेज़ एक ऐसा फ़ितना है जिसमें लगभग सारे ही मुसलमान फँसे हुए हैं । हालाँकि उनमें से पढ़े-लिखे अच्छी तरह जानते हैं कि इस्लाम में इस तक़सीम की कोई गुँजाइश नहीं । यह हमारा एक ऐसा नया इस्लाम है जिसका क़ुरआन मजीद और रसूल (सल्ल०) की हदीसों में कोई औचित्य नहीं मिलता । क़ुरआन पाक तो साफ़-साफ़ कहता है कि फ़ज़ीलत ख़ानदान और नसब को नहीं, अमल और तक़वा को है । आप फिर भी ख़ानदान और शजरह रटते हैं और अपने को मुसलमान कहते नहीं शरमाते, हालाँकि आपका यह तर्ज़े-अमल इस्लाम की पेशानी पर एक बदनुमा दाग़ है और आपके मिल्ली वुजूद के लिए बड़ा ख़तरा ।

शजरह (वंशावली) की रट

अल्लाह तआला ने तो आपको 'ख़ैरे-उम्मत' कहकर उठाया था और क़ियामत तक के लिए सारे इनसानों को बराबर कर दिया था। कहाँ है वह हिदायत जिसमें क़ुरैश को ग़ैर क़ुरैश और आले रसूल (सल्ल०) को ग़ैर अहले बैत से शादी से मना किया गया हो। रसूल (सल्ल०) का अपना नमूना देख लीजिए। उम्महातुल मोमिनीन कौन-सी शजरह रटती हुई आई थीं। हुज़ूर अकरम (सल्ल०) ने ख़ुद अपने ग़ुलाम की शादी क़ुरैश के आला तरीन ख़ानदान की हसीन तरीन लड़की से करके वे सारी रस्में तोड़ दी थीं जिनको हम इतनी अहमियत देते चले आ रहे हैं। आपका यह अमल बहुत-से ग़ैर मुस्लिमों के लिए हिदायत पाने की राह में रुकावट बन रहा है।

मेयार हरग़िज़ यह नहीं कि जब तक कोई बड़ा अफ़सर ओहदेदार न मिले जिसकी तनख़्वाह बहुत भारी हो और फिर वह ख़ानदान भी बहुत ऊँचा या कम से कम आपकी टक्कर का हो तभी आप अपनी लड़की की शादी के बारे में सोचें वरना उसे बिठाए रखें। बालिग़ होने के बाद 2, 3 साल से ज़्यादा लड़की को मेयार की क़ुरबानगाह पर भेंट चढ़ाना इस्लाम के अहकाम की खुली ख़िलाफ़वर्ज़ी ही नहीं, बल्कि फ़ितरत के बनाए हुए क़ानून से मुँह मोड़ना है और उसकी सज़ा आपको जितनी भी भुगतनी पड़े कम है।

नजीबुत्तरफ़ैन (माँ और बाप दोनों ओर से ऊँचा ख़ानदान होना)

मेयार का अर्थ बहुत-से ख़ानदानों में "हसबो नसब का शजरह" (वंशावली) है। लड़का निखट्टू हुआ करे लेकिन है तो नजीबुत्तरफ़ैन।

मैं एक ऐसी अलमनाक घरेलू दास्तान से वाक़िफ़ हूँ जहाँ एक लड़की के लिए बहुत-से अच्छे रिश्ते मिल रहे थे, लेकिन माँ-बाप को उनमें से अक्सर सिर्फ़ इसलिए नामंज़ूर थे कि लड़के का ख़ानदान 'ख़रा' नहीं था। आख़िर में उन्होंने एक ऐसे लड़के से अपनी बेज़बान मासूम लड़की का पल्लू बाँध दिया जिससे बेहतर यह था कि वह उसका गला घोंट देते। उन ख़ानदानी दामाद साहब ने कुछ ही दिनों में वे करतूत दिखाए कि ससुर और सास दोनों उनका मुँह देखने के रवादार न रहे। दो-तीन बरसों ही में लड़की चक्की के दो पाटों में पिसकर रह गई। माँ-बाप की चौखट तक देखने को तरसती है इसलिए कि उनकी तरफ़ से अल्टीमेटम मिल गया है कि उनके घर की चौखट पर क़दम रखने से पहले शौहर को हमेशा के लिए छोड़ना होगा और वह माँ-बाप का हुक्म मानकर शौहर से तलाक़ लेने की हिम्मत नहीं कर पाती। शौहर का हुक्म है कि अगर मेरे घर में रहना है तो ठीक मेरी

तरह होकर रहो । माँ-बाप के पास जाना है तो मेरा दरवाज़ा हमेशा के लिए तुमपर बंद है ।

मेयार की क़ुरबानगाह

हसब-नसब, मालो दौलत, इज़्ज़त, मुलाज़मत ये सारे ही मेयार, मुख़्तलिफ़ ख़ानदानों में सामने रखे जाते हैं और फिर जब मसले पेचीदा से पेचीदा-तर होते जाते हैं तो उनका दुखड़ा रोया जाता है ।

क्या आप में यह हिम्मत है कि इन सारी बेड़ियों को तोड़ दें । आप अगर उस लड़के की माँ हैं जिसके सेहरे के फूल खिलने जा रहे हैं तो आपकी ज़िम्मेदारी उस माँ से ज़्यादा है जो अपनी लड़की को पिछले पंद्रह-बीस सालों से पाल-पोसकर आपके घर की ज़िम्मेदारियाँ सम्भालने के लिए तैयार कर रही है । अगर आप यह हिम्मत कर लें कि 'मेयार' की क़ुरबानगाह पर कोई भेंट नहीं चढ़ेगी तो आपके बहुत-से मसले थोड़े ही दिनों में हल हो सकते हैं ।

आप झूठे हसब-नसब के चक्कर में क्यों अपनी रातों की नींद और लड़कियों की ज़िन्दगी हराम करते हैं । अगर लड़का दीनदार है, पढ़ा लिखा है, रोज़गार करता है, कौड़ियों का मुहताज नहीं, आवारा और बदअख़लाक़ नहीं तो फिर उसे क़बूल कर लेने में आपको कोई हिचक नहीं होनी चाहिए ।

इस्लाम की नज़र में सारे मुसलमान बराबर ही नहीं भाई-भाई हैं । कुफ़ू का यह अर्थ हरगिज़ नहीं कि सैयदों की लड़की सैयदों में ही जाए, किसी और जगह उसकी शादी करना हराम है।

इस्लाम की राह में रोड़ा

एक बात और ध्यान में रखिए । आपके बनाए हुए रस्मों और रिवाजों से इस्लाम को बहुत बड़ा नुक़्सान पहुँच रहा है । आख़िर एक ग़ैर मुस्लिम क्यों इस्लाम क़बूल करे जबकि मुस्लिम समाज का हिस्सा बन जाने के बाद फिर उसे उसी छूत-छात या ज़ात-पात से वास्ता पड़ेगा जो ख़ुद उसके मज़हब का हिस्सा बन चुकी है और उसके लिए जानलेवा है । ऊपर एक ऐसी घटना मैंने आपको बता ही दी जिसमें एक मुसलमान ख़ानदान इस बदतरीन बुराई की नज़र होते-होते बचा और वक़्त पर अगर अल्लाह तआला अपना करम न फ़रमाता तो उस ख़ानदान के धर्म से फिर जाने की ज़िम्मेदारी किस पर होती ?

इस वक़्त इस्लाम की इशाअत की रफ़्तार बहुत सुस्त है, बल्कि यूँ कहिए कि

ग़ैर मुस्लिमों में दावती काम और हक़ के क़बूलने का सिलसिला बिलकुल बंद ही सा है । अगर यह रफ़्तार तेज़ हो जाए तो नौमुस्लिमों को आप किन ज़ातों में बाँटेंगे । कोई हब्शी है, कोइ चीनी है, कोई अंग्रेज़ है, कोई रूसी है । ख़ुद हिन्दुस्तान में कोई ब्रह्मन है, कोई राजपूत है, कोई बनिया है, कोई मोची है, कोई चमार या भंगी है । अगर आपने उनके मुसलमान हो जाने के बाद भी उनके साथ यही तंग नज़री बरती और उन्हें उसी तरह ज़ात और बिरादरी के मुख़्तलिफ़ ख़ानों में जकड़ रखने की कोशिश की तो इस्लाम के उसूलों की सच्चाई उन्हें कितने दिन मुसलमान रख सकेगी । आपका तर्ज़ेअमल देखकर तो वे दूसरे दिन ही वापस भाग जाएँगे । आपके अन्दर कौन-से सुरख़ाब के पर लगे हैं कि वे अपने समाज से कटकर आपके साथ आ मिलें और फिर अपनी इसी तरह तौहीन कराएँ जैसी ख़ुद उनके अपने समाज में हो रही है । यह ज़ात-पात का निज़ाम तो उनके यहाँ भी मौजूद है और अपनी पूरी शिद्दत के साथ । अगर इस्लाम भी ज़ात-पात और बिरादरी का निज़ाम है तो इससे बेहतर यही है कि वे ग़ैर मुस्लिम बने रहें ।

अंजाम से बेख़बरी

सच तो यह है कि हमारी इन्ही जाहिलाना रस्मों और अंजाम से बेख़बरी के रिवाजो ने ग़ैर मुस्लिमों के लिए इस्लाम के दरवाज़े बंद कर रखे हैं । ताज्जुब तो यह है कि आप अपनी इस हट पर उस वक़्त भी जमे रहते हैं जब आप पाँच वक़्त की नमाज़ें पढ़ने मस्जिद में पहुँचते हैं । जहाँ न ब्राह्मण के लड़के और चमार के लड़के का फ़र्क़ रहता है और न काले और गोरे का, न बादशाह और जनता का और न अफ़सर और चपरासी का । अगर आप मस्जिद से यह सबक़ सीख कर नहीं निकलते कि अल्लाह की नज़रों में सारे इनसान बराबर हैं तो आप अपनी नमाज़ों से असल फ़ायदा नहीं उठाते ।

आप इसकी फ़िक्र भी न करें कि लड़का किसी अच्छे ओहदे पर आसीन हो । अगर पढ़े-लिखे दीनदार ताजिर नौजवान का रिश्ता सामने मौजूद है तो वह भी बुरा नहीं । आख़िर डिप्टी कलेक्टर और कमिश्नर या आई०ए०एस० अफ़सर में कोई सुरख़ाब के पर तो नहीं लगे हैं कि उसके इंतिज़ार में आप अपनी बेटी के बाल सफ़ेद कराएँ ।

शादी के इमकानात

"किसी औरत से शादी चार चीज़ों की वजह से की जाती है—

1. माल 2. हुस्नो जमाल 3. हसब-नसब 4. दीन

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया कि तुम दीनवाली औरत को तरजीह दो इसलिए कि वह तुम्हें ख़ुश रखेगी।" —हदीस

एक साफ़-सुथरा छोटा-सा मकान जिसमें आपकी लड़की को मुहब्बत करनेवाला और दीन की समझ रखनेवाला ऐसा शौहर मिल जाए जो उसकी लाज़मी ज़रूरियात को हलाल ज़रियों से पूरा कर सके, उस मकान से कहीं बेहतर है जो देखने में तो बहुत बड़ा और सजा हुआ हो, जहाँ शौहर की नज़रें किसी और तरफ़ लगी हुई हों और आमदनी के ऐसे नाजाइज़ ज़रिए हों जिनके बंद हो जाने का हरदम न सिर्फ़ ख़तरा हो, बल्कि जिससे किसी वक़्त भी सारी इज़्ज़त या मुलाज़मत ख़तरे में पड़ जाए या कारोबार ठप होकर रह जाए।

डर

जो लोग लड़कियों को इसलिए तालीम दिलवाते हैं कि वे शौहर के दबाव में नहीं आएँगी। अल्लाह न करे, शौहर से अलैहदगी, उसकी मौत या फिर शादी न हो सकने की सूरत में ख़ुद कमा-खा सकेंगी, वे एक इंतिहाई ग़लत फ़ैसला करते हैं, जिसका अंजाम भी आमतौर पर बहुत भयानक निकला है। अगर तालीम दिलवाने का मतलब यह है कि शौहर की मरज़ी के ख़िलाफ़ लड़की जो चाहे करती फिरे तो ऐसी तालीम पाई हुई लड़की कभी एक पुरसुकून घर नहीं बसा सकती। टकराव लाज़िमी है और अगर घरेलू तूफ़ान का नतीजा जुदाई में निकले तो ख़ानदान का ढाँचा बिखरकर रह जाएगा।

शौहर से जुदाई या उसकी मौत के डर से जो लोग अपनी बच्चियों की आला तालीम पर ज़ोर देते हैं वे एक सही मसले का ग़लत हल तलाश करना चाहते हैं। यही हाल शादी न होने के डर का है।

अगर लड़की सुशील और नेक सीरत है, तो चाहे कितनी भी मामूली सूरत की क्यों न हो, उसकी शादी के इमकानात ख़ासे रौशन होते हैं। यह सिर्फ़ आपका क़ुसूर है कि आप उसे उसकी फ़ितरी ज़रूरत से महरूम रखते हैं। दुनिया में अव्वल

तो सारे लोग सिर्फ़ शक्लो सूरत या दहेज पर नहीं मरते । जो लोग महज़ शक्लो सूरत पर मरते हैं वे आपकी मामूली शक्लों सूरतवाली लड़की का, चाहे वह कितनी ही ऊँची-तालीम क्यों न हासिल किए हो, अपनी बीवी बनाने के लिए हरगिज़ चुनाव नहीं करेंगे ।

अमली हल

मेरे ज़िहन में लड़की को ऊँची तालीम दिलवाने के सिलसिले में पेश आनेवाले मसलों का जो अमली हल है वह संक्षेप में आपके सामने रख दूँ :—

1. आप 'मेयार' या हसब-नसब के चक्कर में पड़े बिना अपनी लड़की के लिए मुनासिब वर तलाश करें और बालिग़ होने के बाद ज़्यादा से ज़्यादा तीन-चार साल के अन्दर उसकी शादी कर दें । लड़की की उम्र अगर आप कम बताएँगे तो उससे वाक़ई वह कम उम्र नहीं बन जाएगी । 20-22 साल की उम्र तक पहुँचने के बाद लड़की की शादी में हर सम्भव जल्दी करनी ज़रूरी है ।

2. जब तक वर नहीं मिलता आप अपनी हैसियत और लड़की के मिज़ाज के मुताबिक़ उसकी और अधिक तालीम का बंदोबस्त ज़रूर करें । घर बिठाना भी दुरुस्त नहीं, अगर इनसान को कोई काम न हो तो यूँ भी उसका दिमाग़ भटकता रहता है । तालीम दिलवाने के सिलसिले में हर मुमकिन एहतियात कीजिए । यह भी ख़याल रखिए कि यह तालीम सिर्फ़ कॉलेज की ही न हो बल्कि दीनी भी हो और अमली ज़िन्दगी में भी काम आए ।

3. आप अपनी लड़की पर घरेलू काम-काज का बोझ ज़्यादा न डालें, मगर उसे बिलकुल अपाहिज भी न बना दें कि पीने के लिए पानी का गिलास भी आपको उठाकर देना पड़े और जब वह शौहर के घर पहुँचे तो फूहड़ के ख़िताब से नवाज़ी जाए । खाने-पकाने, सीने-पिरोने और दूसरे आम घरेलू कामों के लिए आपकी लड़की हमेशा नौकर की मुहताज न हो ।

4. उसके ज़िहन में हरग़िज़ यह ख़याल न पैदा होने दें कि उसको आला तालीम दिलवाने से आपका मक़सद मनफ़ी (नकारात्मक) है यानी आला तालीम की बदौलत वह शौहर के दबाव में न आ सके । उसके मर जाने की सूरत में आत्मनिर्भर रहे या शादी न होने तक माली लिहाज़ से अपने पैरों पर खड़ी हो सके । ये सारी धारणाएँ हरगिज़ उसके ज़िहन में पैदा न होने दें । अल्लाह तआला हम सबको परेशानियों और आफ़तों से महफ़ूज़ रखे, लेकिन ध्यान रखिए कि मजबूरी में इस आला तालीम से फ़ायदा तो ज़रूर उठाया जा सकता है, लेकिन बज़ाते ख़ुद उसे मक़सद हरगिज़ नहीं बनाया जा सकता ।

5. तालीम के लिए किसी रिश्तेदार या दोस्त के घर छोड़ देना, होस्टल में लम्बी मुद्दत के लिए दाख़िल करा देना, घर पर रहते हुए ज़रूरत से ज़्यादा ढील, ये सारी बातें जानते-बूझते बिगाड़ के लिए रास्ते हमवार करना है। इस उम्र में बहुत कम लड़कियाँ अपने ऊपर क़ाबू रख सकती हैं; इसलिए आपका फ़र्ज़ है कि आप ऐसे हालात न पैदा होने दें जिनमें उनके लिए बिगाड़ का रास्ता खुल जाए।

6. लड़कियों में दीनी शऊर पैदा करें। उनको यह एहसास दिलाएँ कि वे हिन्दुस्तान में मुस्लिम उम्मत की तक़दीर हैं। अगर उन्होंने ख़ुद साबित क़दमी दिखाई और आनेवाली नस्लों की सही परवरिश की तो वे न सिर्फ़ इस्लाम की प्रतिरक्षा कर सकेंगी, बल्कि उसकी तबलीग़ का द्वार भी खोल देंगी।

क़िस्मत को कोई क्या करे

और भी कुछ बातें मेरे सामने हैं लेकिन ज़रा खुलकर तफ़सील बाद में आ रही है। आप ये सब पढ़ने के बाद कह सकते हैं कि :—

1. अरे भाई लड़के तो क़िस्मतवालों को मिलते हैं। हम तो तलाश करते-करते थक गए। कोई ढंग का लड़का मिलता ही नहीं। क्या अपनी लड़की को गढ्ढे में फेंक दें। हर ऐरे-ग़ैरे को तो देने से रहे।

2. हमारे पास देने को जहेज़ नहीं। ज़रा कुछ जमा हो जाए तो फिर शादी की बात सोचें। अभी तो लड़की को पढ़ने ही दो।

दहेज

मैं आपके दूसरे सवाल का जवाब पहले देने की कोशिश करूँगा।

मुसलमानों में जिन बेजा रस्मों ने क़दम जमा लिए हैं उनमें से एक दहेज या तिलक की लानत भी है। अभी कुछ दिनों पहले आपने शायद अख़बारों में पढ़ा हो कि बिहार के एक आला मुसलमान ओहदेदार ने सिर्फ़ इस वजह से आत्महत्या कर ली थी कि उनकी चार लड़कियाँ जवान हो चुकी थीं और मुनासिब जगहों पर उनका रिश्ता करने के लिए जितने दहेज की ज़रूरत थी उसे जमा करना उनके बस से बाहर था।

दहेज की बुराइयाँ बयान करते हमारी ज़बान नहीं थकती, लेकिन जब वक़्त आता है तो ख़ुद ही दहेज लेने पर अड़ जाते हैं।

दहेज भी थोड़ा क़बूल नहीं, मोटर, बंगला, स्कूटर, पंखा, मशीनें, साइकिल,

फ़र्नीचर, बर्तन, वग़ैरह तो होंगे ही, नक़द कितना मिलेगा ?

नबी (सल्ल०) का उसवा

बहुत-से धूर्त लोग तो इस सिलसिले में नबी (सल्ल०) के उसवा-ए-मुबारक की मिसाल पेश करने से भी नहीं चूकते । कहते हैं कि आख़िर प्यारे नबी (सल्ल०) ने भी हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को दहेज दिया था और हज़रत अली (रज़ि०) ने उसको क़बूल करने में कोई हिचकिचाहट नहीं दिखाई थी । अगर रसूल (सल्ल०) दे सकते हैं और उनके क़रीबी सहाबी (रज़ि०) उसे क़बूल कर सकते हैं तो हम तो उनके गुनहगार उम्मती हैं । हमको लेने में क्या एतिराज़ हो सकता है ?

अरे भाई, ज़रूर लीजिए । भला दहेज लेने पर मैं क्यों एतिराज़ करने लगा । लेकिन ज़रा सुनिए तो :—

> "जिसने इस तरह शादी की कि उसके महर अदा करने का कोई इरादा न था, तो ऐसा मर्द ज़िना करनेवाला है ।" —हदीस

1. क्या आपने 'महर' अदा कर दिया है, जो रसूल अकरम (सल्ल०) की सुन्नत ही नहीं, बल्कि अल्लाह तआला का फ़रमान है ? इसको अदा करने में आप कितने नेक नीयत हैं ?

2.लड़की के बाप या भाई को आपकी 'ख़ुशी' के लिए कितना क़र्ज़ लेना पड़ा है ? अगर उसने यह रक़म किसी से सूद पर उधार ली है या घर के ज़ेवर और बर्तन या अपनी जायदाद गिरवी रखकर पैसे जमा किए हैं तो उसका गुनाह आपके सिर होगा या आपकी बीवी के बाप और भाई पर ?

3. आप अपने किसी गहरे दोस्त या रिश्तेदार को दो-चार सौ रुपये उधार देते हुए कई मरतबा सोचते और अक्सर रक़म पास होते हुए और माँगनेवाले की ज़रूरत और नेक नीयती का यक़ीन कर लेने के बावजूद उसे पैसे देने से इस डर से इनकार कर देते हैं कि क़र्ज़ को वसूलना मुश्किल होगा तो आख़िर आप किस तरह यह यक़ीन कर लेते हैं कि आपकी बीवी का 'बाप' अपनी ख़ुशी से अपने लिए इतना गहरा गढ्ढा खोद रहा है ?

4. क्या वाक़ई नबी (सल्ल०) ने इसी तरह दहेज लिया और दिया था जैसा आज हम मुसलमानों में पाते हैं ?

नाक कट जाएगी

छोटा-मोटा दहेज तो आँखों को भाता ही नहीं । अरे मुहल्लेवाले क्या कहेंगे ।

रिश्तेदारों में तो नाक ही कट जाएगी। मेरे फ़लाँ रिश्तेदार को तो इतना दहेज मिला था कि उठाकर घर तक लाने के लिए शहर में मज़दूर नहीं मिल रहे थे।

यह एक ऐसी बीमारी है जिसने तक़रीबन हर जगह मुस्लिम समाज को घुन लगा दिया है। लड़की पैदा होते ही बाप की आँखों में आँसू आ जाते हैं। वह अपनी क़िस्मत को कोसता हुआ उसी दिन से दहेज जोड़ना शुरू कर देता है, अगर दो-चार लड़कियाँ हो गईं तो आत्महत्या की सोचने लगता है।

हास्यास्पद अत्याचार

ज़रा यह सितम ज़रीफ़ी तो देखिए कि यही 'बाप' आज से कुछ साल पहले जब दुलहा बनकर अपनी होनेवाली बीवी के घर पहुँचा था तो दहेज के सिलसिले में अपनी सारी शर्तों को तस्लीम कराने पर 'अड़' गया था, वह उस वक़्त तक रूठा रहा जब तक उसकी सारी शर्तें पूरी न कर दी गईं। यही माँ जो अब अपने 'लड़के' के लिए दहेज की लम्बी-चौड़ी फ़रमाइशें करती नहीं थकती। दुलहन बनने के लिए वर्षों सिर्फ़ इसी वजह से इंतिज़ार करती रही कि उसके बाप के पास दहेज नहीं था। ऐन वक़्त पर जब बड़ी मुश्किल से शादी के दिन सारी फ़रमाइशें पूरी करने के लिए सारे जतन करने पड़े तो वह आठ-आठ आँसू रोती थी।

हर माँ अपनी लड़की के लिए इतनी परेशान रहती है कि उसे रातों को नींद नहीं आती, लेकिन जब अपने बेटे का सेहरा बाँधने चलती है तो पहले मुहल्ले-मुहल्ले, शहर-शहर यह तलाश करती घूमती है कि कहाँ से ज़्यादा दहेज मिल सकेगा।

दहेज हरगिज़ न लीजिए

मर्ज़ की शिद्दत देखते हुए दवा भी बड़ी कड़वी और तेज़ दी जाती है, इसी लिए मैं भी आपसे यही कहूँगा कि दहेज के जाइज़ और नाजाइज़ होने के चक्कर में न पड़िए, बल्कि आज से यह तय कर लीजिए कि आप न दहेज लेंगी और न दहेज देंगी।

दहेज न लीजिए, हरगिज़ न लीजिए। मैं तो कहता हूँ कि अगर लड़की के घर वालों की तरफ़ से आग्रह हो तब भी वापस कर दीजिए। आप ख़ुद मिसाल बनकर दिखाइए। मेरे मुख़ातब आप हैं, हर वह व्यक्ति जो अक़्ल रखता है और होश-हवास में इस्लाम को मानने का दावा करता है, आप चाहे लड़के के बाप या वली की हैसियत रखते हों या ख़ुद दुलहा मियाँ हों।

दहेज हरगिज़ मत दीजिए। आप अपने होनेवाले दामाद और उसके घरवालों

से साफ़-साफ़ कह दीजिए कि दहेज से शादी करनी हो तो वह कोई और घर ढूँढ लें । हम तो 'मोती' जैसी लड़की देंगे और बस ।

अगर पढ़ी-लिखी लड़कियाँ तय कर लें कि वह दहेज के लालची लोगों से शादी नहीं करेंगी और हर मुसलमान लड़का यह तय कर ले कि वह हर तरह के दबाव के बावजूद दहेज या तोहफ़े के नाम पर कुछ भी क़बूल नहीं करेगा तो यह लानत आहिस्ता-आहिस्ता दूर हो सकती है ।

दहेज की लानत हिन्दुस्तान के मुस्लिम समाज में पिछले चार-पाँच सौ-साल के भीतर उस वक़्त आई जब वे शासक थे । वक़्त और पैसे दोनों की फ़रावानी थी और एक 'ग़ैर मुस्लिम' समाज की मिसाल सामने थी ।

हिन्दू समाज में लड़की को बाप की विरासत में कोई हिस्सा नहीं मिलता था, इसलिए दहेज की शक्ल में बाप उसके लिए कुछ इंतिज़ाम कर देता था ।

आज के मुस्लिम समाज में दहेज का लेन-देन अगर नाजाइज़ नहीं तो इंतिहाई नुक़सानदेह और निरर्थक ज़रूर है ।

लड़की का जायदाद में हिस्सा

आप लड़की को अपनी जायदाद में से उसका 'हिस्सा' दें और दहेज का रिवाज बँद करने में मेरा साथ दें । अगर लालची शौहरों को इसका एहसास हो जाए कि दहेज न सही लड़की का हिस्सा तो विरासत में मिलेगा ही तो शायद शुरू ही में उनकी तरफ़ से फ़रमाइशें न हों ।

मेरे सामने ऐसे व्यक्ति की मिसाल मौजूद है जिसने तीन बेटियों का निकाह किया । एक के बाद दूसरा और इस हाल में कि वे जिन कपड़ों में घर के काम-काज में मसरूफ़ थीं, उन्हें उसी में रुख़्सत कर दिया । अगर वे ये कर सकते हैं तो आप क्यों नहीं कर सकते ? ज़रा हिम्मत तो कीजिए ।

न कोई दहेज और न कोई दिखावा

पिछले कुछ वर्षों में एक हुकूमती इदारे में मौजूद मुसलमान लड़कियों के मसलों से मैं व्यक्तिगत तौर पर बहुत अधिक सम्बन्धित रहा हूँ । बहुत-सी मिसालें मेरे सामने हैं । वहाँ शादी की शर्तें बहुत अधिक सख़्त थीं । लेकिन अगर हमारे पास शादी के क़ाबिल एक लड़की होती थी तो उससे शादी के ख़्वाहिशमंदों की तादाद 10,12 या कभी-कभी उससे भी ज़्यादा होती थी । क्यों ?

न तो ये लड़कियाँ हसब-नसबवाली थीं और न आला तालीम पाई हुई, न

उनकी शक्लो सूरत ग़ैर मामूली थी और न ही दहेज मिलने का इमकान था । उनमें से बहुत-सी ऐसी थीं जो अख़लाक़ी पस्ती के गड्ढों से निकलकर इस इदारे की पनाह में पहुँची थीं । हुकूमत की तरफ़ से सिर्फ़ कुछ रुपये की प्रति व्यक्ति ग्रांट मिलती थीं, जिसमें उसके दो जोड़े कपड़ों, एक थाली, कटोरी और दो चमचों का इंतिज़ाम कर दिया जाता था ।

लड़के को शादी से पहले कुछ रुपये ज़मानत की रक़म के तौरपर जमा कराने पड़ते थे जो दो साल तक कामयाब और ख़ुश शादी-शुदा ज़िंदगी बसरकरने की लड़की की तरफ़ से तस्दीक़ (पुष्टि) के बाद ही वापस हो सकते थे । इतनी कठिन शर्तों के बावजूद भी इन गिरी-पड़ी लड़कियों के लिए वर की कभी कमी नहीं महसूस हुई ।

आख़िर क्या था जिसने उन्हें 'मतलूब' बना दिया था । सबसे बड़ी बात तो यह कि शादी के ग़ैर ज़रूरी ख़र्चों से लड़के बच जाते थे । दूसरे वे सारे मसले पैदा नहीं होते थे जो शादी के बाद दो ख़ानदानों में सख़्त नफ़रत या विभेद पैदा करने का सबब बन जाते हैं । लड़की के लिए ज़ेवर या कपड़ों का मुतालिबा भी नहीं था । आपको यह सुनकर ताज्जुब होगा कि उनमें से दो लड़कियाँ गूँगी, बहरी थीं और एक का चेहरा ख़ासा बदशक्ल था लेकिन उनके साथ शादी करने के लिए लोग आए और अब वे अपने घरों में ख़ुश हैं ।

पहल कौन करे

मेरे पास अब भी ऐसे लोगों का तांता बँधा रहता है जो हो सकता है कि आपके ज़िहनी 'मेयार' से नीचे हों, लेकिन इसी तरह की सीधी-सादी शादी के ख़्वाहिशमंद हैं । उनकी आमदनी कोई ज़्यादा नहीं लेकिन बहरहाल अपना ख़ानदान आसानी के साथ चला सकते हैं । इतने पढ़े-लिखे नहीं कि आप उन्हें ग्रेजुएट कह सकें लेकिन अनपढ़ या जाहिल भी नहीं । ख़ासा दीनी शऊर रखते हैं लेकिन किसी के साथ हसब-नसब का चक्कर है, कोई बिरादरी का मारा हुआ है, किसी की बीवी मर गई है और उससे दो-तीन बच्चे हैं इसलिए कोई दूसरी शादी पर तैयार नहीं होता ।

आज भी ऐसे बहुत-से व्यक्ति मिल जाएँगे जो चाहते हैं कि उनके यहाँ शादियाँ बिलकुल सीधे-सादे तरीक़े से अंजाम पाएँ । ख़र्च कम से कम हो और उनपर बहुत अधिक बोझ न पड़े । बहुत-से व्यक्ति अब भी मेरे पास इस ग़रज़ से आते हैं, लेकिन अफ़सोस यह है कि मैं उनके लिए ऐसे ख़ानदान नहीं तलाश कर पाता जहाँ उन्हें मतलूबा लड़कियाँ मिल सकें ।

ऐसे माँ-बाप की तादाद भी कम नहीं जो अपनी लड़कियों की शादी के लिए फ़िक्रमंद न हों और नाम और दिखावे के बदले एक सादा-सी तक़रीब में निकाह को तरजीह दें। मसला है सिर्फ़ पहल करने का और किसी हद तक नेक नीयती का।

अभी कुछ दिन पहले पंजाबी बिरादरी की तरफ़ से कुछ पाबँदियों का एलान हुआ था। बड़ी अच्छी थीं तजवीज़ें, बशर्ते कि बिरादरी उनपर सख़्ती से अमल दरामद कर सके। सबसे बड़े क़सूरवार वे खाते-पीते ख़ुशहाल मुसलमान घराने हैं जो बिरादरी की पाबँदियों की परवाह भी नहीं करते। इस्लाम को तो वे पहले ही भुला बैठे हैं। ये अपनी लड़की के लिए ज़्यादा से ज़्यादा क़ीमत देकर लड़के ख़रीदने पर तैयार रहते हैं और इस सिलसिले में किसी उसूल की परवाह नहीं करते।

ज़रा ये भी आज़माइए

"अल्लाह तुम्हारे लिए अहकाम साफ़-साफ़ बयान करता है, ताकि तुम भटकते न फिरो ।"
—क़ुरआन

"तुम पूरे के पूरे इस्लाम में आ जाओ और शैतान की पैरवी न करो क्योंकि वह तुम्हारा खुला दुश्मन है ।"
—क़ुरआन

गंभीर मसला

आज से तीन-चार साल पहले एक साहब मेरे पास आए । बड़े ख़ूबसूरत और तंदुरुस्त, साहिबे जाएदाद और ख़ासे बड़े कारोबार के मालिक । उम्र ज़्यादा से ज़्यादा 35-36 साल लेकिन चेहरे से कभी इतने नहीं मालूम होते थे । बात होने लगी तो उन्होंने कहा कि वह दूसरी शादी के सिलसिले में मेरी मदद चाहते हैं ।

मैंने जब हालात तफ़्सील से सुने तो पता चला कि उनकी बातें ख़ासी हद तक सही हैं । उनके बच्चे बड़े प्यारे और ख़ूबसूरत थे, लेकिन बीवी बीमार थीं और इसी वजह से उनकी जाइज़ तस्कीन से भी मजबूर । मैंने कहा कि उनकी मौजूदा बीवी से बातचीत के बाद ही कोई फैसला किया जा सकता है, वह उसके लिए भी ख़ुशी से तैयार हो गए और बिना किसी लागलपेट के ले जाकर उन्होंने अपनी बीवी से बातचीत का मौक़ा उपलब्ध करा दिया ।

यह अजीब बात थी कि उनकी बीवी अपनी मजबूरी से न सिर्फ़ वाक़िफ़ थीं, बल्कि अपने शौहर की परेशानियों को भी अच्छी तरह समझतीं थीं, लेकिन जब मैंने उनके सामने चंद शर्तों के साथ दूसरी बीवी की तजवीज़ रखी तो जैसे उन्हें किसी बिच्छू ने डंक मार दिया हो, वे ग़ुस्से से लाल-पीली हो गईं और उन्होंने यह तजवीज़ बिलकुल ठुकरा दी । मैंने उन्हें बताया कि उनके इख़राजात में कोई कमी या मर्तबे में फ़र्क़ नहीं आएगा । माली हालात ऐसे हैं कि दूसरी बीवी दूसरे घर में रहेगी, लेकिन वह टस से मस न हुईं । वे इसके लिए तो तैयार थीं कि उनका शौहर अपनी जिस्मानी ख़्वाहिश की तस्कीन के लिए किसी और लड़की से नाजाइज़ ताल्लुक़ात क़ायम करले और उसके लिए रक़म सर्फ़ करने में भी कोई हर्ज नहीं, वह ये सब माफ़ कर देंगी, लेकिन उन्हें सौतन का वजूद किसी क़ीमत पर गवारा नहीं ।

एक और साहब ज़रा तेज़ निकले । उन्होंने दूसरी शादी का सारा बंदोबस्त कर

लिया और दूल्हा बारात के साथ दुल्हन के मकान पर । लेकिन उन्होंने अपनी पहली बीवी को एतमाद में लिए बिना यह क़दम उठाया था । ऐन वक़्त पर बीबी के कानों में किसी तरह भनक पड़ गई । शादी जहाँ हो रही थी वह जगह कई मील की दूरी पर थी, लेकिन बीवी फ़ौरन बच्चों समेत वहाँ जा पहुँची और वह तूफ़ान बरपा किया कि सारी महफ़िल दरहम-बरहम हो गई । निकाह होने से पहले ही सेहरे के फूल नुच गए ।

इस हादसे में बीवी थी तो सेहतमंद, लेकिन शौहर की ख़्वाहिश की तकमील नहीं कर पाती थी । उसे इसका इक़रार भी था । यह भी उसे मालूम था कि जिंसी तस्कीन के लिए उसका शौहर दूसरी औरतों के पास जाता है जिनमें बाज़ारी औरतें भी शामिल हैं, जहाँ पैसों की बरबादी का ही नहीं जिंसी बीमारियों में भी मुबतिला हो जाने का डर था । अक्सर वह ख़ुद ही रुपये देकर घर से उस मक़सद के लिए भगा देती थी । यह सब कुछ उसे बर्दाश्त था, लेकिन अगर कोई बात नामुमकिन थी तो वह सौतन का घर में क़दम ।

ज़ुल्म और बेरहमी

एक और साहब ने अपनी हैसियत के बल-बूते पर दूसरी शादी छुपते-छुपाते कर ली तो उनकी मौजूदा बीवी ने उनसे हमेशा के लिए अलग रहना स्वीकार कर लिया । 7-8 बरस से ज़्यादा ही गुज़र चुके हैं, वह अब भी अपनी पहली बीवी और उनके साथ रहनेवाले सारे बच्चों का ख़र्च उठाते हैं और बड़े खुले दिल से, लेकिन बीवी शौहर की सूरत देखने को तैयार नहीं । वैसे जस्टिस धवन का मशहूर फ़ैसला तो आपने पढ़ा ही होगा और न पढ़ा हो तो कम से कम सुना ज़रूर होगा ।

दूसरी शादी बेरहमी है । एक से ज़्यादा शादियों का रिवाज औरतों पर ज़ुल्म है—यह इनसानियत की क़द्रों की ख़िलाफ़वर्ज़ी है । भला इस मुहज़्ज़ब दौर में कोई इतना गिरा हुआ ख़याल का भी हो सकता है । दो या ज़्यादा शादियाँ रचानेवाले ऐयाश और गंदे होते हैं । ये और इसी जैसे कितने ही रिमार्क आप रोज़ सुन सकते हैं ।

मुझे अपनी मुलाज़मत के शुरू के दिनों में अपने ग़ैर मुस्लिम साथियों से मुसलमानों के बारे में जो आम तास्सुरात सुनने को मिले उनमें से कुछ बहुत अहम थे जिनपर सोच-विचार की ज़रूरत भी है । एक तो यह कि मुसलमान गंदे होते है, ख़ुद भी गंदे रहते हैं और बस्ती, मुहल्ले को भी गंदा रखते हैं । दूसरा बहुत-सख़्त एतिराज़ बार-बार यह सुनने में आया कि हर मुसलमान लाज़मन चार शादियाँ करता है । (इतने यक़ीन के साथ गोया एक शादी करनेवाला मुसलमान मुसलमान ही नहीं

रहता)

आज भी उत्तरी हिन्दुस्तान के बहुत-से शहरों में किसी मुसलमान के लिए किराए का मकान ग़ैर मुस्लिम आबादियों में हासिल करना बहुत मुश्किल काम है । ख़ुद यहाँ दिल्ली में जहाँ तालीम का औसत बहुत ही कम है, इस मसले से मुझे अकसर पाला पड़ा है और इसमें दख़ल है इन्हीं दो बुनियादी ग़लतफ़हमियों का ।

मालिक मकान ने मुसलमान का नाम सुना और अगर मुहज़्ज़ब है तो दिल में, वरना आपके मुँह पर कह दिया कि मुसलमान को मकान देना 'पाप' है । दिल्ली में कुछ दिनों पहले अख़बारों में इस सिलसिले में बड़ी हलचल मची थी ।

पिछले दिनों एक हुकूमती इदारे के सर्वे में प्रकाशित होनेवाले आँकड़ों ने जान-बूझकर बड़े पैमाने पर फैलाई गई इन ग़लतफ़हमियों का भांडा फोड़ दिया था । इस सर्वे के मुताबिक़ मुसलमानों में दूसरी शादी करनेवाले हज़ार में सात थे तो ग़ैर मुस्लिमों में इसका औसत एक हज़ार में तेरह से भी ज्यादा था ।

ख़ुद फ़ैसला कीजिए

दूसरी शादी पर एतराज़ करनेवाले इन कुछ सवालों का जवाब दे सकें तो बहुत अच्छा होगा ।

1. आपके सामने दो मुतबादिल सूरतें (विकल्प) हैं । या तो आपका शौहर आपका या आपके साथ आपकी सौतन का बनकर रहे या यह कि 'शौहर' तो आपका रहे और दूसरी कितनी ही लड़कियों और औरतों से नाजाइज़ तालुक़ात क़ाएम रखे । आप किस सूरत को पसन्द करेंगी ।

2. आपका शौहर किसी दूसरी औरत पर आशिक़ हो जाता है और हर क़ीमत पर उससे शादी करना चाहता है । उसके लिए वह आपको तलाक़ देने पर भी आमादा है । क्या आप उससे तलाक़ लेकर सारे ख़ानदानी ढाँचे को बरबाद करना बेहतर समझेंगी या कुछ शर्तों के साथ दूसरी बीवी से निबाह करना ।

3. वह समाज ज़्यादा मुहज़्ज़ब है जो हर मर्द और हर औरत को क़ानूनन तो सिर्फ़ एक ही शादी की इजाज़त देता है, लेकिन रज़ामंदी के साथ ज़िना पर कोई पाबन्दी नहीं लगाता । अगर शौहर अनगिनत रखैल रखे या बीवी अनगिनत आशिक़ों से दिल बहलाती फिरे तो उसे कोई एतराज़ न हो । जहाँ हरामी बच्चों और कुँवारी माँओं का तसव्वुर न सिर्फ़ क़ाबिले क़बूल हो, बल्कि उनके लिए सरकार क़ानूनी और आर्थिक सहुलियात उपलब्ध कराए ।

या वह समाज ज़्यादा सुसभ्य है जो हरामकारी के सारे दरवाज़े मर्दों और औरतों

पर सख़्ती से बँद कर देता है और मर्द को महदूद तादाद में शादियों की इजाज़त देता है, और वह भी इंतिहाई शर्तों और सीमाओं के साथ ।

4. वह क़ानून समाज के लिए ज़्यादा बेहतर है जो ज़िना पर पाबन्दी सिर्फ़ उस वक़्त लगाता है जब वह ज़बर्दस्ती हो या वह क़ानून ज़्यादा बेहतर है जो नफ़सानी तस्कीन के सारे जाइज़ रास्ते उपलब्ध कराने के बाद 'ज़िनाकारी' पर सख़्त सज़ा देता है ।

5. आप अपनी लड़की को बिन ब्याही माँ देखना पसन्द करेंगी या दूसरी बीवी की हैसियत से एक घर की शरीक और मालकिन ।

6. आप यह पसन्द करेंगी कि आपकी लड़की शौहर न मिलने की वजह से या तो कुँवारी बुढ़िया हो जाए या अपनी जिंसी तस्कीन के लिए दूसरे रास्ते इख़्तियार करे या यह पसन्द करेंगी कि उसकी फ़ितरी ज़रूरियात एक शौहर की दूसरी बीवी बनकर पूरी हो जाएँ ।

फ़ितरी तक़ाज़ा

यहाँ बहस इस्लाम की दी हुई इजाज़तों से नहीं उन फ़ितरी तक़ाज़ों से है जिनका अवलोकन हमें रोज़ ही होता रहता है ।

मेरे साथियों में से एक साहब पिछले तीन साल से बार-बार सिर्फ़ इसलिए मुसलमान होने के ख़्वाहिशमंद हैं कि वह दूसरी शादी कर सकें । मौजूदा बीवी कई असबाब की बिना पर उनकी जाइज़ तस्कीन से मजबूर है । कुछ तो अख़लाक़ी क़द्रों की पाबन्दी और कुछ अपनी शराफ़ते नफ़्स की बिना पर वह अब तक बहके नहीं हैं, लेकिन अगर जल्द ही उनके लिए कोई बेहतर शक्ल पैदा न हुई तो वह गुनाह की खाई में फिसल सकते हैं । अपनी सेहत के एतबार से भी वे ठीक हैं । माली लिहाज़ से भी वह इस पोज़ीशन में हैं कि दूसरी बीवी का बोझ बर्दाश्त कर सकें । जब भी उन्होंने मुझसे ज़्यादा इसरार किया तो मैंने यही कहकर पीछा छुड़ाया कि मुझे ऐसे मुसलमान नहीं चाहिए जो सिर्फ़ दूसरी बीवी हासिल करने के लिए मुसलमान हो जाएँ, जबकि वह इस्लाम की बुनियादी बातों से भी वाक़िफ़ न हों ।

एक साहब की बीवी का इंतिक़ाल हुए 12-14 साल हो चुके हैं । उन्होंने अब तक दूसरी शादी नहीं की है, जबकि बीवी के इंतिक़ाल के वक़्त उनके बच्चे बहुत छोटे थे । उम्र भी 35 साल से कम ही थी । अरे कौन जाए हाथी पालने! मेरा तो यूँ ही काम चल जाता है । ख़ासे खाते-पीते होने की वजह से उनके लिए नफ़्सानी तस्कीन के साधन ढूँढ लेना ज़्यादा मुश्किल नहीं ।

अपने बच्चों की आया (सेविका), घर में काम-काज के लिए आनेवाली मुलाज़िमा, दफ़्तर में उनके मातहत काम करनेवाली क्लर्क लड़कियाँ, सभी का शिकार कर चुके हैं । उन्हें इसमें भी आर नहीं कि लंच टाइम में अपनी मातहत क्लर्कों के साथ खाना खाएँ और इंतिहाई ढिठाई से उन्हें ऐश की दावत दें ।

इनसानी फ़ितरत

इस्लाम ने इनसानी फ़ितरत का लिहाज़ रखते हुए जाहिलियत के ज़माने के उस रिवाज को सिर्फ़ चार तक महदूद कर दिया है, जिसमें अनगिनत बीवियाँ रखने की इजाज़त थी और यह भी सिर्फ़ इजाज़त है, फ़रीज़ा नहीं । पश्चिम ने फ़ितरत से लड़ते हुए एक बीवी की क़ैद लगा दी है, लेकिन असंख्य दाश्ताओं की इजाज़त दे दी है । क्यों ? सिर्फ़ इसलिए कि जिंसी तस्कीन का कोई न कोई रास्ता तो होना ही चाहिए ।

मैं इसका इनकार तो यक़ीनन नहीं करता कि इस्लाम की दी हुई इजाज़त से बहुत-से लोगों ने नाजाइज़ फ़ायदा उठाया और भूतकाल में ही नहीं, अब भी उसे इस तरह इस्तेमाल किया जा सकता है जो ज़ुल्म की हदों में आ जाए । लेकिन सिर्फ़ इसी दलील से तो एक से ज़्यादा शादियों की इजाज़त हमेशा के लिए नाजाइज़ या फ़ितरत के ख़िलाफ़ नहीं क़रार दी जा सकती । यह तो ऐसा ही है जैसे कोई हुकूमत मुल्क में सड़कें और रेलें सिर्फ़ इसलिए तामीर न कराए कि जंग की सूरत में उनका इस्तेमाल दुश्मन की फ़ौजें भी कर सकती हैं; या किसी शहर की सारी मोटरों और ट्रकों के लाइसेंस सिर्फ़ इसलिए ज़ब्त कर लिए जाएँ कि उनसे रोज़ाना ही बहुत-सी दुर्घटनाएँ होती रहती हैं ।

मैं ऐसी बहुत-सी मिसालें दे सकता हूँ, जहाँ दूसरी शादी करने के बाद लोगों ने पहली बीवी को बिलकुल नज़रअंदाज़ कर दिया या सम्बन्ध तोड़ लिया । बहुत-सी मिसालों में ख़ानदान का सुकून सिर्फ़ इसलिए दरहम-बरहम हो गया कि घर में दो सौतनें हो गईं । लेकिन इन सारी घटनाओं के पीछे आप देखें तो क़ुसूर लोगों के अपने तर्ज़ेअमल या दीनी जज़्बे की कमी का होगा न कि बज़ाते ख़ुद दूसरी शादी का । ऐसी अनगिनत मिसालें भी तो दी जा सकती हैं जहाँ एक ही बीवी के होते हुए भी घर उजड़ गए या सारे रिश्ते कट गए ।

इस्लाम ने दूसरी शादी की इजाज़त कुछ हदों और शर्तों के साथ दी है । अच्छी सेहत, माली हैसियत, इख़राजात और दूसरे बुनियादी मामलात में बराबरी और सबसे बढ़कर ख़ुदा-तरसी जैसी अहम शर्तों को पूरा किए बिना इस इजाज़त से अंधा-धुंध फ़ायदा उठाना यक़ीनन ज़ुल्म है ।

समाधान

मैं दूसरी शादी की हिमायत करता हूँ और अक़्लमंद मर्द ही नहीं सूझ-बूझ रखनेवाली औरत भी इसकी पुरज़ोर ताईद करेगी, लेकिन सिर्फ़ उस वक़्त जब हालात उसकी ज़रूरत को साबित कर दें । जो लोग इसकी मुख़ालिफ़त करते हैं वे या तो अक़्ल से कोरे हैं या फ़ितरत का वह क़ानून बदलना चाहते हैं जिसे कोई बदल नहीं सकता । दूसरी शादी बहुत-सी सूरतों में पसंदीदा ही नहीं, बल्कि ज़रूरी है ।

आप मुझे मेरी इस बात पर 'मर्दज़ात' होने का ताना यक़ीनन देंगी, लेकिन मैं इस गाली को सुनने के लिए तैयार हूँ । इसके मुक़ाबले में, कि पश्चिमी क़द्रों के असर से या मौजूदा हालात के दबाव से मजबूर होकर एक बीवी रखने को ही क़ानूनी तौर पर लागू करने की हिमायत करूँ, मुझे ऐसी रौशनख़याली और तरक़्क़ीपसंदी हरगिज़ नहीं चाहिए जो एक ही बीवी को क़ानूनी शक्ल दे दे, लेकिन ज़िना (रज़ामंदी से सही) के सारे दरवाज़े खोल दे ।

सारी औरतें शादी की उम्र में पहुँचने से लेकर बुढ़ापे की हदों में दाख़िल होने तक हर महीने और हर साल (या कुछ सालों के वक़्फ़े से सही) कुछ दिनों इस हालत में होती हैं कि वे अपने उन्हें शौहर की जिंसी तस्कीन से क़ासिर रहती हैं । अगर वह किसी वजह से बीमार हो जाएँ या किसी ज़रूरत से उन्हें शौहर से अलग किसी दूसरी जगह रहना हो तो भी शौहर की तस्कीन का मसला उठता है । और अगर मान लिया जाए कि बीवी इंतिहाई सेहतमंद है जब भी बहुत-से शौहर जिस्मानी सेहत के एतबार से ऐसे हो सकते हैं जो एक से तस्कीन न पा सकें या सेहतमंद होते हुए भी एक बीवी अपनी सारी कोशिशों के बावजूद उसको तस्कीन न दे सके । क्या आप चाहते हैं कि वह अपनी तस्कीन के लिए दूसरे दरवाज़े झाँकता फिरे ?

अगर हम यकसू होकर अपने समाजी मसलों को सुलझाने पर तुल जाएँ तो एक पत्नित्व से आगे जाने की ज़रूरत बहुत कम पड़ेगी और शायद अब मुसलमानों में जो औसत है यानी हज़ार में सात का, उससे भी कम तनासुब रह जाए । हर मुहल्ले और हर गली या हर बस्ती में समझदार बड़े बूढ़ों की ऐसी विचार-विमर्श की कमेटी क़ाएम हो सकती है जो इन मसलों को सामूहिक रूप से तय करने की कोशिश करे या कमेटियाँ मक़ामी तौरपर एक दूसरे से और फिर इलाक़ाई बुनियादों पर और अधिक विस्तार के साथ एक दूसरे से जुड़ सकती हैं ।

दूसरी शादी की हिम्मत-अफ़ज़ाई से हम अपने कई अहम मसलों के समाधान में मदद ले सकते हैं । शर्त सिर्फ़ यह है कि इस्लामी न्याय के तक़ाज़ों का लिहाज़ रखा जाए और इस इजाज़त से नाजाइज़ फ़ायदा उठाने की कोशिश न की जाए ।

सबसे पहला फ़ायदा तो यह होगा कि मुहल्ले या बस्ती की ग़रीब, यतीम, बदसूरत, मुख़तलिफ़ जिस्मानी ऐबों और नक़ाएस रखनेवाली लड़कियाँ और शादी लाएक़ बेवाएँ ज़िन्दगी का सहारा पा लेंगी और उनकी जाइज़ जिंसी ज़रूरत पूरी हो सकेगी ।

आँखें खोलिए

आप अपनी आबादी का सर्वे करें तो ऐसी बहुत-सी मिसालें सामने आ सकती हैं, जब वक़्त पर शादी न होने की वजह से लड़कियाँ ग़लत रास्तों पर चल निकलीं । पानी जब सर से गुज़रने लगा तो उनके ख़ानदानों ने या तो किसी न किसी तरह उसपर परदा डालने की कोशिश की या फिर उनकी जल्दी-जल्दी कहीं शादी कर दी जिसमें से अक्सर नाकाम रहीं और जैसे ही शौहरों को बीवी के पिछले करतूतों का पता चला उन्होंने घर से निकाल दिया । या फिर जिस्मानी पीड़ाएँ देकर मार डाला । अभी हाल ही में एक ऐसी दुल्हन की घटना अख़बारों में प्रकाशित हुई थी जिसने शौहर की चौखट पर उतरते ही नाजाइज़ बच्चे को जन्म दे दिया और जिस जगह ख़ुशी की शहनाइयाँ बज रही थीं वह मातम कदा बन गई ।

जिस्मानी नक़ाएस रखनेवाली लड़कियों को शौहर सिरे से मिलते ही नहीं । अगर मिलते हैं तो उनकी घरेलू ज़िन्दगी बड़ी तल्ख़ होती है और अक्सर ख़ातमा जुदाई पर होता है । ऐसी बेवाएँ भी ख़ासी तादाद में मिल जाएँगी जो शादी की उम्र में हैं, लेकिन उनके लिए मुनासिब लड़के नहीं मिलते । क्या उनके लिए घर नहीं हो सकते हैं ? यक़ीनन, बशर्ते कि आप अपने दिलों में ज़रा गुंजाइश पैदा कर लें, एक बीवी की हैसियत से, एक माँ की हैसियत से और एक सौतन की हैसियत से ।

एक और अहम मसला जो एक से अधिक बीवी रखने की हिम्मत अफ़ज़ाई से ख़ासी हद तक हल हो सकता है, वह है दहेज़ का । दूसरी शादी के तलबगार अमूमन दहेज के ख़्वाहिशमंद नहीं होते और न शादी में ज़्यादा चमक-दमक पसन्द करते हैं । अगर समाज को इस ढंग से तरबियत दी जाए कि बेवाओं की शादी को बुरा न समझा जाए और दूसरी शादी के ख़्वाहिशमंद नफ़्सानी तस्कीन से ज़्यादा हमदर्दी के जज़्बे से काम लें तो यह कुछ मुश्किल नहीं कि दहेज का लेन-देन ख़ासी हद तक कम हो जाए ।

ऐसी बेवाएँ जो शादी की उम्र में हों, ऐसी लड़कियाँ जो जिस्मानी तौरपर नाक़िस हों या ज़िहनी तौरपर मजबूर हों, ऐसी यतीम लड़कियाँ जो शक्लो सूरत में मामूली हों या वे लड़कियाँ जो किसी बिना पर शादी की औसत उम्र से निकल चुकी

हों और उनके लिए मुनासिब रिश्ते न मिल रहे हों, ऐसे लोगों को सौंपी जा सकती हैं जो माली हैसियत और जिस्मानी सेहत के एतबार से न सिर्फ़ दो या अधिक बीवियाँ रखने के अहल हों, बल्कि दीनी मिज़ाज भी रखते हों और उनसे उम्मीद यही हो कि वे अद्ल और न्याय की शर्त को, जहाँ तक हो सके, निभा सकेंगे ।

अंधी तक़लीद (अंधा अनुसरण)

पिछले विश्वयुद्ध के दौरान सिर्फ़ जर्मनी में औरतों की तादाद मर्दों से कई गुना ज़्यादा बढ़ गई, यही हाल यूरोप के दूसरे मुल्कों का था । अब भी वहाँ एक लड़के के मुक़ाबले में लड़कियों का औसत कई का है । पश्चिमी समाज अपनी इस ज़िद पर अड़ा हुआ है कि एक मर्द के लिए क़ानूनी तौर पर एक ही बीवी हो और इसी वजह से वह उन सारी सामाजिक बुराइयों को बरदाश्त करने पर मजबूर है जो इस असन्तुलन से पैदा होनी लाज़मी हैं । दाश्त बनकर रहने में वहाँ की औरतों को कोई परहेज़ नहीं, लेकिन बहु-पत्नीत्व की बात सुनना भी वे गवारा नहीं करतीं ।

ख़ुद हमारे यहाँ हालिया जंग में बेवा होनेवाली औरतों की तादाद ख़ासी है । उनकी फ़लाह और भलाई की तरफ़ हुकूमत और दूसरे समाजी इदारे ख़ासी तवज्जोह दे रहे हैं । लेकिन सबकी सोच यही है कि इन बेवाओं की माद्दी ज़रूरियात पूरी कर दी जाएँ । क्या उनके मसलों का सिर्फ़ यह माद्दी हल काफ़ी है । उनमें से बहुत-सी तो अभी शादी की उम्र में हैं और कुछ की शादी को कुछ बरस का अर्सा भी नहीं गुज़रा । क्या यह उनके लिए अज़ाब से कम नहीं कि उन्हें फ़ितरी ख़्वाहिश पूरी करने से हमेशा के लिए महरूम कर दिया जाए । अब या तो वे अपनी जिंसी ख़्वाहिश की तकमील के लिए नाजाइज़ ताल्लुक़ात क़ायम करने की कोशिश करें और अपने आस-पास के समाज को गंदा करें या जो मर्द भी हाथ लगे उससे घर बसा लें, ख़्वाह उसकी वजह से एक दूसरा घर उजड़ जाए ।

इनमें से कुछ को तो दूसरे शौहर शायद मिल जाएं इसलिए कि वे न सिर्फ़ कम उम्र हैं बल्कि ख़ूबसूरत अैर तालीमयाफ़्ता भी । लेकिन उनकी अक्सरियत ऐसी ही औरतों की है जिनको पहली बीवी के तौरपर क़बूल करने के लिए मुश्किल ही से कोई मर्द तैयार होगा । कुछ के साथ बच्चे भी होंगे । अगर हमारा समाज वाक़ई हस्सास हो तो यह हल कहीं बेहतर नज़र आता है कि ऐसे व्यक्ति तलाश किए जाएँ जो चाहे शादी शुदा हों, मगर जिस्मानी सेहत और माली हैसियत से दूसरी बीवी और उसके बच्चों का बोझ बर्दाश्त करने के लिए तैयार हों और अख़लाक़ी हदूद के पाबंद भी हों । उनके सामने जिंसी आसूदगी हासिल करने से ज़्यादा उजड़े हुए ख़ानदानों को फिर से बसाने की आरज़ू हो । इस तरह समाज भी गंदा होने

से बच जाएगा और मसला भी अच्छी तरह सुलझ जाएगा ।

इस्लाम यही हल पेश करता है और ऐसे ही मौक़ों के लिए दूसरी शादी की इजाज़त का इस्तेमाल सराहनीय है ।

अभी हाल ही में हैदराबाद में तवाइफ़ों से मुताल्लिक़ एक सर्वे किया गया था । इस सर्वे के मुताबिक़ ज़्यादातर तवाइफ़ें वे हैं जो बेवा हो गईं थीं या फिर जिन्हें उनके शौहरों ने छोड़ दिया था ।

इनमें से अक्सर की हालत इंतिहाई क़ाबिले रहम थी । बेशतर की आमदनी बहुत मामूली थी और उनमें से 55% जिन्सी मर्ज़ों में मुबतिला थीं और उनको दूसरों तक तेज़ी से फैला रही थीं । बाक़ी में से ज़्यादातर ने ग़रीबी के हाथों मजबूर होकर यह पेशा इख़तियार किया था । तक़रीबन 25% तवाइफ़ें समाज के बेरहमाना सलूक की वजह से यहाँ पहुँचीं और कुछ बचपन की शादी की वजह से ।

तवाइफ़ों की अक्सरिया जिंसी अमराज़ या टी०बी० का शिकार होकर सिसक-सिसककर मरती हैं । आप उनसे उम्र के किसी हिस्से में यह सवाल करें कि वह अपनी मौजूदा ज़िन्दगी पसन्द करती हैं या समाज में कोई बाइज़्ज़त मक़ाम चाहती हैं; तो 99% का जवाब यही होगा कि वे हर क़ीमत पर बाइज़्ज़त ज़िन्दगी गुज़ारने को तैयार हैं, लेकिन समाज उसके लिए रास्ता तो पैदा करे ।

पश्चिमी देशों की अंधी तक़लीद में हम बड़ी तेज़ी से उनकी बातों और उसूलों को अपनाते जा रहे हैं । ज़रा उसकी झलक भी देखते चलिए ।

रजिस्ट्रार जनरल की रिपोर्ट के मुताबिक़ सिर्फ़ लंदन शहर में पिछले एक साल में रजिस्ट्रों के इंदराज के मुताबिक़ एक लाख छब्बीस हज़ार औरतों ने अपने गर्भ गिरवाए । उनमें ढ़ाई हज़ार से ज़्यादा ऐसी कुँवारी लड़कियाँ थीं जिनकी उम्रें 16 साल या इससे कम थीं ।

1970 ई० के मुक़ाबले में इस रिपोर्ट के मुताबिक़ इसक़ाते हमल (गर्भपात) के केसों में 75 प्रतिशत का इज़ाफ़ा हुआ है । 1970 ई० में यह तादाद अस्सी हज़ार सात सौ तेईस थी । हमल गिरवानेवाली औरतों में से आधी तादाद उन औरतों की थी जो होटलों और क्लबों में नंगी नाचती थीं और उनमें से बहुतों की उम्र 16 साल या इससे भी कम थी । पूरे इंग्लैण्ड के आँकड़े इससे कई गुणा ज़्यादा हैं ।

अमेरिकी जन गणना विभाग की रिपोर्ट के मुताबिक़ 1960 ई० से अमेरिका में तलाक़ के वाक़िआत में 80 प्रतिशत का इज़ाफ़ा हुआ है । उल्लिखित अवधि में दूसरी शादी के वाक़िआत में 40 प्रतिशत का इज़ाफ़ा हुआ है । रिपोर्ट के मुताबिक़ 27 से 32 साल की उम्र की 29 प्रतिशत औरतों के वैवाहिक जीवन तलाक़ की नज़र

हो जाते हैं और उनमें से 20% तलाक़ पाई हुई औरतें दोबारा शादी कर लेती हैं, लेकिन फिर दूसरी बार भी तलाक़ का सामना करना पड़ता है ।

1960-62 ई० में अमेरिका में तक़रीबन 4 लाख औरतों ने तलाक़ हासिल की जबकि 1969-71 में यह तादाद 7 लाख तक पहुँच गई ।

जनगणना की ये सूची ख़ासी लम्बी हो सकती है । मैंने तो नमूने के तौरपर 'ढेर में से एक मुट्ठी' आपके समाने रख दिए । इस्लाम ख़ानदान और समाज दोनों का की पवित्रता रखना चाहता है इसलिए उसकी हिदायतें बिलकुल वाज़ेह हैं । आप अपनी मनमानी करना छोड़िए और पूरे के पूरे उसकी इताअत पर कमरबस्ता हो जाइए फिर देखिए कि वह क्या करिश्मा दिखाता है । लेकिन अगर आप अब भी पश्चिमी उसूलों का अनुसरण ही पसन्द करती हैं या इस्लाम को अपनी मरज़ी के मुताबिक़ चलाना चाहती हैं तो फिर उन नतीजों को भुगतने के लिए तैयार हो जाइए जो दूसरे मुल्कों को तेज़ी से अनारकी की तरफ़ धकेल रहे हैं ।

कामयाबी का राज़

"औरतों के लिए भी न्यायोचित तरीक़े पर वैसे ही अधिकार हैं जैसे मर्दों के अधिकार उनपर हैं । अलबत्ता मर्दों को उनपर एक दर्जा हासिल है ।"

—क़ुरआन

"मर्द औरतों के ज़िम्मेदार हैं । इस आधार पर कि अल्लाह ने उनमें एक को दूसरे से श्रेष्ठ बनाया है और इस आधार पर कि मर्द अपने माल ख़र्च करते हैं ।" —क़ुरआन

"उनके साथ भले तरीक़े से ज़िन्दगी बसर करो । अगर वे तुम्हें ना पसन्द हों तो हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो मगर अल्लाह ने उसी में बहुत कुछ भलाई रख दी हो ।" —क़ुरआन

आपने अपनी लड़की को बेहतरीन तरीक़े से पाला-पोसा, बेहतरीन तालीम दिलवाई । उसकी ज़िहनी, जिस्मानी और नफ़्सियाती तरबियत का ध्यान रखा और वक़्त आने पर उसे एक अच्छे शौहर को सौंप दिया । यक़ीनन आपका काम बहुत हद तक यहाँ ख़त्म हो जाता है । अब आपकी लड़की की समझ-बूझ और उसकी तरबियत का इम्तिहान शुरू होता है ।

"तुमने कोई ऐसी चीज़ निकाह के सिवा न देखी होगी जो दो इनसानों के दरमियान, जो एक-दूसरे के लिए बिलकुल अजनबी हों, इतनी गहरी मुहब्बत पैदा कर दे ।" —हदीस

गुड़िया का विवाह

आपने अपनी बेटी की शादी की तो यक़ीनन ये समझकर कि यह गुड्डे-गुड़िया का ब्याह नहीं, बल्कि एक ऐसा रिश्ता है जिसमें ज़िन्दगी भर का साथ है । ज़िन्दगी सिर्फ़ सुख-सुविधाओं और ख़ुशियों का नाम नहीं, रंजो ग़म के बादल भी कभी-कभी छा जाते हैं । कामयाब इनसान वही हैं जो ख़ुशी में फूलकर आपे से बाहर नहीं निकल जाते और रंजो ग़म में तक़दीर को कोसना नहीं शुरू कर देते । आप अपनी प्यारी बेटी को जब दूसरे घर भेजने लगें तो उसे कुछ बातें अच्छी तरह समझा दें ।

1. शादी गुड्डे-गुड़िया का ब्याह नहीं, ज़िन्दगी भर का पैमान है । दुनिया में ऊँच-नीच आती रहती है, लेकिन इस दौड़ में कामयाब वही रहते हैं जो अपने

साथी का हाथ थामे, सारी ऊँच-नीच से गुज़रते चले जाएँ। ज़िहन में कभी यह धारणा नहीं होनी चाहिए कि यह रिश्ता कच्चे धागे का है जिसे जब चाहे तोड़ दिया जाए।

2. शादी के बाद की घरेलू ज़िन्दगी की ख़ुशियाँ बरक़रार रखने में प्रमुख कारक शौहर से वफ़ादारी है। अगर शौहर को इशारों-कनायों में भी कभी यह शुबहा हो गया कि मेरी बीवी की नज़रें किसी और तरफ़ जमी हैं या उसकी तवज्जोह और करम का केन्द्र सिर्फ़ वही नहीं कोई दूसरा भी है तो शीशे में वह बाल पड़ जाएगा जो फिर कभी दुरुस्त नहीं होता। शादी के बाद मुहब्बत के दरजों में तबदीली ही ज़रूरी नहीं, बल्कि उन सारी वफ़ादारियों से अलग होना भी ज़रूरी है जो शौहर से वफ़ादारी की राह में रुकावट बन सकती हों। मुराद हरगिज़ यह नहीं कि अगर शौहर आग्रह करे तो बीवी अपने माँ-बाप से अपने सम्बन्ध तोड़ ले। माँ-बाप से फ़ितरी मुहब्बत अपनी जगह है जिसपर कोई शौहर होशो हवास में रहते हुए पाबन्दी लगाने के बारे में सोच भी नहीं सकता, लेकिन दूसरों की तरफ़ मुहब्बत भरी नज़रें.....यह एक ऐसा वार है जिसे कोई शौहर एक लम्हें को भी बर्दाश्त नहीं करता। शादी के बाद बीवी की तमामतर मुहब्बत का केन्द्र वह ख़ुद को देखना चाहता है।

> "सबसे अच्छी बीवियाँ वे हैं जब तुम उन्हें देखो तो दिल बाग़-बाग़ हो जाए, जब किसी काम का हुक्म दो तो वे तुम्हारी इताअत करें और जब तुम उनके पास न हो तो वे अपने सतीत्व और पवित्रता की हिफ़ाज़त करें और तुम्हारे माल की भी।" —हदीस

3. अच्छी ख़ासी शक्लो सूरतवाली लड़कियाँ जो शादी से पहले अपनी साज-सज्जा का हद दर्जा ख़याल रखती थीं, शादी के कुछ ही दिन बाद सारा सबक़ भूल जाती हैं। घर में इस तरह सिर झाड़ मुँह फाड़ रहेंगी गोया शादी के बाद ख़ूबसूरत बने रहने या साज-सज्जा की ज़रूरत ही नहीं। अगर आपने भी यह रवैया अपना लिया है तो फ़ौरन उसे छोड़िए। इसी में आपका भला है। शौहर की निगाहें हमेशा अपने ऊपर मरकूज़ (केन्द्रित) रखने का गुर यही है कि आप शादी से पहले अपने हुस्न और अपनी सेहत का जितना ख़याल रखती थीं उससे कहीं ज़्यादा अब रखिए। आपका शौहर दिन का ख़ासा हिस्सा बाहर गुज़ारता है। उसके न चाहते हुए भी कितने ही ख़ूबसूरत चेहरे इंतिहाई नफ़ीस कपड़ों में बने-सँवरे उसके सामने आते रहते हैं। अगर आपने अपने को साज-सज्जा की पाबंदियों से इस हद तक आज़ाद कर लिया है कि घर में घुसते ही शौहर को आपकी मैली-कुचैली सूरत के अलावा कुछ नज़र नहीं आता तो आप ख़ुद उसे धकेल रही हैं कि वह अपनी नज़रें कहीं

और जमाए ।

सिर्फ़ सफ़ाई-सुथराई ही काफ़ी नहीं, शादी के बाद बनने-सँवरने की भी उससे कहीं ज़्यादा ज़रूरत है जितनी शादी से पहले थी । मैं आपको यह मशविरा तो नहीं देता कि आप अपनी साज-सज्जा में इस क़द्र लीन हो जाएँ कि घर की दूसरी सारी ज़िम्मेदारियाँ भूल जाएँ या नौकरों के सर डाल दें, लेकिन यह ज़रूर कहूँगा कि :

1. शौहर के घर आने से पहले घर को साफ़-सुथरा कर दीजिए ।

2. बच्चे हों तो उनको हाथ-मुँह धुलाकर साफ़-सुथरे ढंग के कपड़े पहना दीजिए ।

3. ख़ुद एहतिमाम से बन-सँवरकर उसका इंतिज़ार में कीजिए । आपके कपड़ों से अगर तेज़ ख़ुशबू न फूट रही हो तो कम से कम उनसे पसीने या मैल-कुचैल की बदबू भी न आ रही हो । सर कंघी, चोटी, आँखें सुरमें काजल और नाख़ून सफ़ाई बग़ैर न हों ।

4. चेहरे पर थकावट या ग़ुस्से के आसार न हों ।

"मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से ज़्यादा किसी को मुस्कुराते नहीं देखा ।"
—हदीस

5. शौहर के घर आने पर मुस्कुराते चेहरे से उसका स्वागत कीजिए । आपकी एक मुस्कुराहट उसकी दिन भर की थका देने वाली दौड़-भाग और ज़िन्दगी की जद्दोजहद में अथक मेहनत का सारा बोझ उसके ज़िहन से उतार देगी । आपका मुस्कुराता चेहरा उसे अगले दिन के लिए जिद्दोजहद करने की ताक़त अता कर देगा । आप दिन भर के काम से थककर चूर हो चुकी हैं और रूखे-फीके चेहरे से उसका स्वागत कर रही हैं या किसी बात पर अपनी नाराज़गी का इज़हार करने के लिए मुँह बनाए बैठी हैं तो उसकी परेशानी दुहरी हो जाएगी और यह भी हो सकता है कि वह अपनी दिन-भर की मशक़्क़त का इज़हार आप पर या बच्चों पर कड़ुवेपन और ग़ुस्से से करे ।

शौहर को हमेशा यह एहसास दिलाने की कोशिश कीजिए कि उसकी इतनी देर की जुदाई आपके लिए असहनीय थी और घरेलू कामों में फँसे रहने के बावजूद आपका दिल आपके शौहर में लगा हुआ था ।

शौहर को भी कभी अपनी बीवी के दिल में यह एहसास नहीं पैदा होने देना चाहिए कि घर से बाहर की मसरूफ़ियात उसके दिल से बीवी का ख़याल निकाल देती हैं । अगर बीवी को यह एहसास हो गया कि उसके शौहर के लिए उसका काम या उसकी दुकान ही सब कुछ है तो उसकी मुहब्बत में कमी आ सकती

है ।

6. शौहर के कुछ निजी काम ख़ुद करने की कोशिश कीजिए । उसकी पसन्द और उसकी ख़ुशी का ख़याल रखिए । याद रखिए कि जब तक आप माँ-बाप के घर थीं तो वहाँ बेटी और बहन की हैसियत से सभी आपसे किसी न किसी तरह मुहब्बत करते थे और आपकी कमज़ोरियों की तरफ़ से अक्सर आँखे बंद कर लेते थे । लेकिन वहाँ भी आपकी कामयाबी का राज़ आपकी निःस्वार्थ सेवा थी; माँ-बाप के लिए भी और भाई-बहनों के लिए भी । शौहर को हमेशा यह एहसास दिलाइए कि आप उसकी छोटी से छोटी ज़रूरत को ख़ुद अपने हाथों से पूरा करने में खुशी महसूस करती हैं ।

निःस्वार्थ सेवा एक ऐसा गुर है जो हर बीवी और हर बहू को ज़िन्दगी के हर मोड़ पर कामयाबी की तरफ़ ले जाता है ।

घर आते ही शौहर को मुँह धोने के लिए पानी और तौलिए की ज़रूरत है । आप फ़ौरन आगे बढ़कर उसे ज़रूरत की चीज़ें थमा दीजिए । देखिए इसका क्या असर पड़ता है । आपकी तरफ़ से रोज़ाना एक मामूली-सी व्यवस्था भी, जो उसके व्यक्तित्व से सम्बन्धित हो, उसके दिल में आपके लिए वह जगह पैदा कर देगी जो आप किसी दूसरे तरीक़े से हासिल करने में सोच भी नहीं सकतीं ।

बच्चों के सिलसिले में भी किसी हद तक यह बात दुरुस्त है । आप हमेशा अपनी ख़िदमत लेने की फ़िक्र न कीजिए । दूसरों को कुछ देने का भी ध्यान रखिए ।

तनहाई में शिकवा-शिकायत

"अपनी बीवी के चेहरे पर मत मारो और उसे दूसरों के सामने बुरा भला न कहो ।"
—हदीस

7. आपके पास शिकायतों का पूरा दफ़्तर है शौहर से, बच्चों से, शौहर के सम्बन्धियों से, उसके माँ-बाप और भाई-बहनों से; लेकिन शिकायतों का यह दफ़्तर उसके घर में घुसते ही न खोल दीजिए । घरेलू झगड़े किस घर में नहीं होते । सास-बहू के मतभेदों से कौन-सा घराना बचा हुआ है । कौन शौहर ऐसा है जो आइडियल हो, कीड़े निकालने हों तो फ़रिश्तों में भी निकाले जा सकते हैं । ख़ामियाँ और कमज़ोरियाँ हर एक में हैं । ग़लतियाँ हरेक से मुमकिन हैं ।

ध्यान रखिए कि शौहर का स्वागत मुस्कुराते हुए कीजिए । मुस्कुराते हुए न कि आँसुओं और सिसकियों से ।

शिकायतों का दफ़्तर खोलना है तो सदा तन्हाई में जहाँ कोई तीसरा उन्हें सुननेवाला

न हो, यहाँ तक कि आपके अपने बच्चे भी नहीं । शैतान का सबसे बड़ा हथियार शौहर और बीवी के बीच मतभेद पैदा करना है ।

अगर आपने शिकायत का दफ़्तर सबके सामने खोल दिया तो ज़रा सोचिए कि घर की इज़्ज़त क्या रही, आपके बच्चे अपने माँ-बाप के बारे में क्या राय क़ायम करेंगे । तू-तू मैं-मैं की आवाज़ पड़ोसियों तक पहुँचेगी । मुहल्ले में चर्चा होगी और आपको मिलेगा क्या ? नाराज़गी बढ़ेगी । शौहर से मतभेद पैदा होगा । घर जहन्नम का नमूना बन जाएगा, न आपको ज़िहनी सुकून मिलेगा और न दूसरों को । हो सकता है कि स्थिति और अधिक गंभीर हो जाए और सम्बन्ध इतने बिगड़ जाएँ कि नौबत तलाक़ और जुदाई तक पहुँच जाए ।

आप विश्वास करें कि वे सहेलियाँ और पड़ोसिनें जो आपकी शिकायत को बढ़ावा देती हैं और नमक-मिर्च लगाकर आपकी भावनाओं को भड़का देती हैं, हरगिज़ आपकी दोस्त नहीं । उन्हें आपकी ख़ुशगवार घरेलू ज़िन्दगी एक आँख नहीं भाती । मुहल्ले के लोग आपकी हँसी उड़ा सकते हैं या कटे पर नमक छिड़क सकते हैं, लेकिन आपकी शिकायत का इलाज नहीं कर सकते । अपनी प्रतिष्ठा का ख़याल रखिए और दूसरों को मज़ाक़ उड़ाने का अवसर न दीजिए ।

शौहर से शिकायतें तनहाई में कीजिए । किसी तीसरे के सामने यह हरगिज़ न आने पाए कि आपकी आँखों में ग़ुस्से के आँसू थे । आपकी मुहब्बत भरी एक मुस्कुराहट या आँसुओं के कुछ क़तरे उन सारी शिकायतों को दूर करने के लिए काफ़ी हैं जो आपके शौहर को आपसे या आपको दूसरों से पैदा हो गई हैं । तन्हाई में अपने सारे मामले तय कर लीजिए; कोई बड़े से बड़ा मसला या बड़ी से बड़ी ग़लती ऐसी नहीं जिसकी आप सच्चे दिल से माफ़ी चाहें या जिसे साफ़ नीयत से आप हल करने के लिए चिंतित हों और वह हल न हो सके या उसे माफ़ न किया जा सके ।

8. कच्ची बातें मुँह से न निकालिए । आपको शौहर के रिश्तेदारों से शिकायतें हो सकती हैं । सास, ससुर से देवर और नंद से या दूसरे लोगों से । उसी तरह आपके शौहर को आपके रिश्तेदारों की किसी हरकत पर ग़ुस्सा आ सकता है, लेकिन हमेशा एहतियात कीजिए । सबके सामने ज़बान से कोई ऐसी कच्ची बात न निकालिए जिसे ताना समझा जा सकता हो । अल्लाह तआला का कितना बड़ा एहसान है कि उसने दो ख़ानदानों को एक-दूसरे से हमेशा के लिए जोड़ दिया । आप क्यों इस रिश्ते को काट फेंकने की कोशिश करती हैं । अगर आपकी किसी बात से तौहीन (मानहानि) का कोई पहलू भी निकल आया तो बात बढ़ सकती है । निकाह के ख़ुतबे में सीधी-सच्ची बात कहने पर ज़ोर ख़ास तौर से इसी वजह

से दिया गया है । अपनी ज़बान क़ाबू में रखिए । अगर आपकी ज़बान हर वक़्त आपके क़ाबू में है तो समझ लीजिए कि आपने अपना घर बिगड़ने से बचा लिया ।

9. दया और सहानुभूति से काम लीजिए, ग़लतियाँ इनसानों ही से होती हैं । आपके शौहर भी इनसान हैं । हालात का दबाव, इनसानी कमज़ोरियाँ, ग़ुस्सा और ऐसे ही बहुत-से कारण हैं जिनकी वजह से उनसे कोई भी ऐसी हरकत हो सकती है जो आपको पसन्द न हो । मगर आप फ़ौरन ग़ुस्सा न दिखाइए । शायद आपका टोकना भी किसी वक़्त आपके शौहर के ग़ुस्से को भड़का दे । ज़बान क़ाबू में रखिए और ज़िहन को भी । ज़रा इंतिज़ार कीजिए, ग़ुस्सा ठंडा हो लेने दीजिए । अगर आपने हिकमत से काम लिया तो वही शौहर जो ज़रा देर पहले आप पर बरस रहा था आपके सामने मोम की तरह पिघल जाएगा ।

अगर आपसे कोई ग़लती हो जाए तो उसको सुधारने की कोशिश कीजिए । अपनी ग़लती पर अड़ने की आदत न डालिए और न ही उसे सही साबित करने की कोशिश कीजिए । ग़लती की माफ़ी अगर माँगी जाए तो बड़े सख़्त दिल इनसान भी पिघल जाते हैं ।

10. और सबसे आख़िरी बात है घर का इंतिज़ाम । यह घर आपका है । आप उसकी मालकिन हैं । उसकी सफ़ाई-सुथराई और ख़ूबसूरती आपके द्वारा ही है । घर को कबाड़ख़ाना न बनाइए जहाँ सामान बेतरतीब पड़ा हुआ हो और जो घर में घुसे वही आपके फूहड़पन की दाद दे । घर के लिए ज़रूरी सामान का चुनाव कीजिए । उसको लाने और उसको तरतीब और सलीक़े से लगाने में ख़ुद दिलचस्पी लीजिए । सफ़ाई का काम बच्चों और नौकरों के सुपुर्द न कीजिए । ध्यान रखिए कि कम से कम मेहनत में ज़्यादा से ज़्यादा सफ़ाई और तरतीब की सूरत निकल आए ।

कमरों को फ़रनीचर और दूसरी चीज़ों से सजाने में सलीक़ा दिखाइए । पुरानी चादरें और इस्तेमाल के कपड़े जिनको बेकार समझकर फेंक दिया जाता है, अगर सलीक़ा हो तो ज़रा-सी मेहनत से परदों और दूसरे लाभदायक उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल हो सकते हैं ।

ख़र्चों की तरफ़ से आप नज़रें नहीं बन्द कर सकतीं, अगर शौहर की कमाई इतनी नहीं है कि आप अपनी पसन्द की हर चीज़ ले सकें तो उन चीज़ों पर सँतोष कीजिए जो वह ला सकता है । उन्हीं कम क़ीमत चीज़ों को ढंग और सलीक़े से इस तरह सजाइए कि घर ख़ूबसूरत लगने लगे ।

घर के सारे ख़र्च का बजट बनाइए । बहुत-सी घरेलू उलझनों का कारण ख़र्चों

में सँतुलित न होना होता है, अगर आप आमद और ख़र्च का माहाना बजट बना लें और इस बजट पर जहाँ तक सम्भव हो सके कठोरता के साथ कार्य करें तो अधिकांश मसले हल हो जाएँगे ।

अगर आप कोई ऐसा काम कर सकती हैं जो शौहर के आर्थिक साधनों को बढ़ा सके तो अपना फ़ालतू वक़्त उसमें लगाइए । गप हाँकने और समय बरबाद करने से अच्छा है कि आप प्रतिष्ठा की ग़लत सोच अपने ज़िहन से निकाल दें । आप अगर ख़ुद कमा सकती हैं और उससे आपकी घरेलू ज़िन्दगी प्रभावित नहीं होती तो इसमें कोताही न करें ।

आप तो माशा अल्लाह शिक्षित हैं । शौहर और बच्चों की तन्दुरुस्ती का ख़याल रखिए । उनके खाने-पीने में जहाँ तक सम्भव हो सावधानी बरतिए । घरेलू मामलात की उन किताबों से फ़ायदा उठाइए जिनमें बीमारियों से सुरक्षित रहने की तदबीरें या बीमारी के ज़माने में की जाने वाली हिफ़ाज़ती तद्बीरों की तफ़सील मिल जाती है ।

आप घर की मालकिन बनना चाहती हैं तो सिर्फ़ ज़बान चलाने से काम नहीं चलेगा । हाथ पैर हिलाइए और साथ ही वह ज़िहन और शिक्षा भी प्रयोग कीजिए जो आपके पास है ।

माँ और सास

"एक आदमी ने नबी (सल्ल०) से पूछा कि मेरे अच्छे व्यवहार का सबसे अधिक अधिकारी कौन है ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया: 'तेरी माँ' उसने कहा: फिर कौन ? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया: 'तेरी माँ' उसने कहा: फिर कौन ? तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया: 'तेरी माँ ।' उसने कहा: फिर कौन ? तो आप (सल्ल०) ने फरमाया कि तेरा बाप, फिर दरजा-बदरजा जो तेरे क़रीबी लोग हैं ।" —हदीस

यह औरत की तीसरी हैसियत है और शायद महत्वपूर्ण भी । अक़्ल की पुख़्तगी के साथ-साथ तजुर्बों ने उसे दुनिया की ऊँच-नीच समझा दी है । यहाँ पहुँचकर अपने रास्ते का चुनाव उसके लिए ज़्यादा मुश्किल नहीं रहता । इस दौर में उसके फ़र्ज़ों की सूची कुछ और लम्बी हो जाती है, लेकिन साथ ही साथ उसे अपनी सालों की मेहनत का फल मिलने लगता है । वह उन छायादार पेड़ों की छाँव में बैठकर कुछ देर सुस्ता सकती है जिसे उसने अपने ख़ून-पसीने से सींचा था ।

माँ

"औरत अपने शौहर के घर और उसके बच्चों की देखभाल करनेवाली (संरक्षक) है, उससे उनके बारे में पूछा जाएगा ।" —हदीस

माँ की हैसियत से उसका पहला फ़र्ज़ औलाद की तरबियत है । बच्चों का पालन-पोषण तो सभी माँए करती हैं, लेकिन एक मुसलमान माँ का फ़र्ज़ दूसरों से कहीं अधिक है । उसका फ़र्ज़ न सिर्फ़ अपनी औलाद को मुहब्बत से पालना-पोसना है बल्कि उन्हें एक अच्छा मुसलमान बनाना भी है । उनके अन्दर केवल अच्छी आदतें पैदा करनी है और उन्हें बुरी आदतों से दूर रखना है । अगर बच्चे पड़ोस, स्कूल या माहौल से प्रभावित होकर ग़लत रास्तों पर आगे बढ़ रहे हों तो हमदर्दी और सहानुभूति से उनके सुधार की फ़िक्र करनी है । अगर आपने मार-पीट से डाँट-डपटकर या कोसने देकर औलाद को ठीक करने की कोशिश की तो आप अपने फ़र्ज़ में नाकाम हो गईं । बच्चे आपकी पसन्द और ना पसन्द को इस प्रकार से जानने लगें कि ज़बान से कुछ कहने की ज़रूरत ही न हो, सिर्फ़ आँखों का इशारा ही काफ़ी हो ।

औलाद की परवरिश का यह मतलब हरगिज़ नहीं कि आप अपने शौहर को

नज़र-अंदाज़ कर दें । बच्चे बड़े होते जा रहे हैं, उनके बारे में आपकी ज़िम्मेदारियाँ बढ़ती जा रही हैं, लेकिन अपने वक़्त का और अपनी तवज्जोह का एक हिस्सा अब भी आप अपने शौहर के लिए मख़सूस रखें । बच्चों को यह एहसास कभी न हो कि घर में माँ को बाप की या बाप को माँ की कोई परवाह नहीं । बच्चों में हमेशा यह एहसास उभारें कि बाप उनके लिए इतना ही दयावान और शुभचिंतक है जितनी माँ ।

बच्चे यूँ तो बाप से डरते हैं, लेकिन कभी-कभी माँ के कहने पर उसे नज़र-अंदाज़ करने की हिम्मत कर सकते हैं । आप इसका ख़याल रखिए कि आपके बेजा लाड-प्यार से बच्चों के दिल में बाप की प्रभावहीनता का एहसास हरगिज़ न पैदा हो । बाप अगर बच्चों के सुधार की ख़ातिर कभी डांट-डपट से भी काम ले तो आपको बीच में कूदने की ज़रूरत नहीं । बेजा मार-पीट से अलबत्ता आप बच्चों को बचा सकती हैं ।

बच्चों के अख़लाक़ की निगरानी कीजिए, न तो अपनी आँखें बिलकुल बंद कीजिए और न हर वक़्त इस टोह में रहिए कि बच्चे क्या कर रहे हैं । अगर आपने हर-हर बात पर बच्चों को टोका तो उनमें बग़ावत या आपसे घृणा की भावना पैदा हो जाएगी ।

बच्चों के सामने शौहर से किसी बात पर तू-तू, मैं-मैं की नौबत आ गई तो गोया आपकी तरबियत की सारी कोशिशें बेकार गईं । मैंने पहले भी आपको मशविरा यही दिया था कि शिकायतों का दफ़्तर हमेशा एकांत में खोलिए, किसी भी तीसरे के सामने नहीं, यहाँ तक कि बच्चों के सामने भी नहीं ।

माँ बनने के बाद आप सास बनती हैं । अब बच्चों से आपकी मुहब्बत और दुनियादारी के बीच सन्तुलन रखने की परीक्षा शुरू होती है ।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया कि वह व्यक्ति जो बदले में रिश्तेदारी का लिहाज़ करता है वह मुकम्मल दर्जे का दया-भाव करनेवाला नहीं । सर्वश्रेष्ठ दया-भाव तो यह है कि जब दूसरे रिश्तेदार उसके साथ सम्बन्ध तोड़ें तो यह उनके साथ अपना सम्बन्ध जोड़े और उनका हक़ अदा करे । —हदीस

सास-बहू के झगड़े हर घर मे आम हैं कहीं कम और कहीं अधिक । अगर शुरू से ही कुछ बातें आप अपने सामने रखें तो शायद गर्मा-गर्मी की नौबत कम ही आए ।

1. अगर आप लड़के की माँ हैं तो यह अच्छी तरह समझ लीजिए कि शादी के बाद आपके लड़के की मुहब्बत दो दिशाओं में बंट जाती है । पहले उसका

सारा हिस्सा आप ही समेट लेती थीं । अब एक और शरीक घर में आ गई है । आप कभी इसपर न कुढ़िए कि आपके बेटे को आपसे पहली-सी मुहब्बत नहीं रही ।

2. आपके लड़के को अगर अपनी बीवी से मुहब्बत है तो यह एक स्वाभाविक भावना है । आप उसे कम करने या घृणा में बदलने की कोशिश न कीजिए । इससे आपका मानसिक सुकून छिन्न-भिन्न हो जाएगा और आपके लड़के की घरेलू ज़िन्दगी बरबाद हो जाएगी ।

3. बहू को आप स्वयं अपने घर लाई हैं । आख़िर अब आप यह क्यों चाहती हैं कि वह आपके घर से चली जाए । पहले दिन उसका अभिवादन मुस्कुराते चेहरे से किया था । अब भी उसी प्रकार मुस्कुराकर उसे देखिए । उसे घर में उसकी हैसियत दीजिए । उसमें कमियाँ होंगी, सहानुभूति के साथ उनके सुधार की कोशिश कीजिए । बिलकुल उसी तरह जैसे आपने अपनी बेटी की ग़लतियों को भुलाया था और उसे बार-बार माफ़ किया था । ऐब निकालना कभी भी पसन्दीदा हरकत नहीं । मुहल्ले पड़ोस में जाकर बहू में कीड़े निकालने से बचिए । अपने बेटे से बहू की छोटी-छोटी ग़लतियों की शिकायत न कीजिए । तू-तू, मैं-मैं से बचिए । मुहल्ले और पड़ोसवाले हँस तो सकते हैं या नमक छिड़ककर आपकी भावना में आग लगाकर और भड़का सकते हैं, लेकिन आपके दुखों का इलाज नहीं कर सकते । अपने दुखों का इलाज तो आपके अपने पास है । आप बहू से मुँह फेरकर या मुँह फुलाकर क्यों बैठ जाती हैं, उसे एकांत में बुलाकर मुहब्बत से समझा दीजिए । अगर आपने बार-बार बेटी कहकर पुकारा तो अम्माँ-अम्माँ कहते उसकी ज़बान ज़िन्दगी भर ख़ुश्क नहीं होगी ।

अगर आप लड़की की माँ हैं तो घर में आनेवाले दामाद का स्वागत कीजिए । अल्लाह ने आपको एक पाली-पोसी औलाद से नवाज़ा है । अगर आप अपना बरताव ज़रा बेहतर रखें तो आपका दामाद आपकी औलाद का बेहतर बदल साबित हो सकता है । अगर आपकी बेटी कभी आपसे शिकायत करे तो बजाए उसे बढ़ावा देने के मुहब्बत से समझा दीजिए । अगर आपने बेटी की 'हाँ में हाँ' मिलाई या उसे वे मशविरे दिए जो उसकी शिकायत में और बढ़ोतरी का कारण बनते चले जाएँ तो आप अपनी बेटी के रास्ते में काँटे बो रही हैं । बेटी की तरफ़दारी से ज़्यादा आपका उद्देश्य स्थिति के सुधार का होना चाहिए । शिकायतों पर गर्म होने, दामाद को बुरा-भला कहने या उसके घरवालों को कोसने देने से समस्याएँ तो हल होने से रहीं, उल्टा यह सम्भव है कि रही सही कसर पूरी हो जाए और जिस बेटी को आपने बड़े अरमान से ब्याहा था वह रोती-धोती हमेशा के लिए आपके घर

आकर बैठ जाए । हो सकता है आपको कभी यक़ीन की हद तक यह मालूम हो कि ग़लती सरासर शौहर और उसके घर वालों की है मगर इस पर गर्मी दिखाने के बजाए सोचिए कि उनमें किस तरह आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाए बिना पश्चाताप की भावना उभारी जा सकती है । आपकी ओर से कोई छोटा सा क़दम उन बहुत से मसलों का बेहतरीन हल पैदा कर सकता है जो अकड़ने की सूरत में दोनों ख़ानदानों को हमेशा के लिए एक-दूसरे का दुश्मन बना देते ।

अगर आपने माँ और सास की हैसियत से अपनी ज़िम्मेदारियों को ठीक ढंग से निभाया तो आयु के इस हिस्से में आपको अपनी औलाद, अपनी बहू और अपने दामाद से वह सुख मिलेगा जो आपने कभी सोचा भी न होगा । अब समय आ गया है कि आपको अधिक से अधिक आराम और सुकून मिले । ज़िन्दगी की साहसपूर्ण कठिनाइयों से इतने दिनों तक जूझने के बाद अब आप अपने बच्चों और अपनी बहू को यह फ़र्ज़ सौंप दें । निगरानी और मशविरों से उनकी रहनुमाई कीजिए । अल्लाह आपके घर को ख़ुशियों का गहवारा बनाए रखे ।

(आमीन) !!!